राजस्थान लोक सेवा आयोग

सामान्य अध्ययन

प्रश्न पत्र - 2

इकाई-2

टॉपिक - K

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

जैव प्रौद्योगिकी एवं उसके उपयोग

पाठ्यक्रम

जैव प्रौद्योगिकी एवं उसके उपयोग

जैव प्रौद्योगिकी

जैव प्रौद्योगिकी, जीव विज्ञान के नियमों का मानव हित में प्रयोग है। विस्तार से कहें तो जैव प्रौद्योगिकी सूक्ष्म जीवों, पादपों तथा पशुओं आदि सजीव पदार्थों का इस प्रकार से प्रयोग करने का नाम है जिसमें मानव अपने मनोवांछित उद्देश्यों को पूरा कर सके।

जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग कई स्तरों पर किया जा सकता है। अर्थात् संपूर्ण जीव के स्तर पर, किसी अंग के स्तर पर, ऊतक के स्तर पर, कोशिका के स्तर पर तथा D.N.A. या जीन के स्तर पर। पिछले कुछ वर्षों में जब से जैव प्रौद्योगिकी का तीव्र विकास होने लगा है अधिक प्रयास इस बात के लिए किए जा रहे हैं कि मानव जीन के सूक्ष्म स्तर तक इस तकनीक का प्रयोग कर सके। यही कारण है कि वर्तमान समय में जैव प्रौद्योगिकी को दो भागों में बांटा जा सकता है–1. जीन जैव प्रौद्योगिकी 2. गैर जीन जैव प्रौद्योगिकी

जैव तकनीक का उपयोग किसी न किसी रूप में मानव प्रागैतिहासिक काल से ही करता आ रहा है सामान्य घरेलू गतिविधियों में कई ऐसे खाद्य पदार्थ बनाए जाते थे जिनके लिए किण्वन जैसी जैव प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाता था। उदाहरण के लिए पनीर, शराब तथा दही जैसे पदार्थ किसी न किसी रूप में जैव प्रौद्योगिकी के ही उत्पाद हैं।

आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग 1950 ई० के बाद आरंभ हुआ यह वह समय है जब अनुसंधानों के माध्यम से D.N.A. के बारे में विशिष्ट जानकारियां मिलनी शुरू हुई। 1973 ई० में डा० हरगोविन्द खुराना ने जब पहली बार जीन संश्लेषण का सफल प्रयोग किया तो इस क्षेत्र में विकास की अभूतपूर्व संभावनाएं पैदा हुई। अब वैज्ञानिकों ने जीन, D.N.A. तथा कोशिका जैसे सूक्ष्म स्तरों पर वैज्ञानिक विधियां विकसित कर ली हैं जिससे प्रौद्योगिकी कारगर ढंग से मानव के हित में उपयोगी होने लगी है।

जैव प्रौद्योगिकी के लाभ- प्राथमिक रूप से जैव प्रौद्योगिकी की उपयोगिता चार क्षेत्रों में मुख्य रूप से है-

1. **कृषि**- ट्रांसजेनिक आर्गेनिज्म के उत्पादन में जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके कम समय में अच्छा उत्पादन में जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके कम समय में अच्छा उत्पादन किया जा सकता है। इससे विकासशील देशों में गरीबी और कुपोषण की समस्या को दूर किया जा सकता है। विपरीत परिस्थितियों (ठंडा, सूख, लवण, ताप) के प्रति अधिक सहिष्णु फसलों का निर्माण संभव हो सका है। रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता कम हुयी है या कम हो सकती है। पौधों द्वारा खनिज उपयोग क्षमता में वृद्धि (यह शीघ्र मृदा उर्वरता समापन को रोकता है) हुई है। खाद्य पदार्थों के पोषणिक स्तर में वृद्धि उदाहरणार्थ, विटामिन समृद्ध धान उपर्युक्त उपयोगों के साथ-साथ जीएम का उपयोग तदनुकुल पौधों के निर्माण में सहायक है, जिनसे वैकल्पिक संसाधनों के रूप में उद्योगों में वसा, ईंधन व पोषणीय पदार्थों की आपूर्ति की जाती है। जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा कीटप्रतिरोधी फसलों का निर्माण संभव हो सका है जो कीटनाशकों की मात्रा को कम प्रयोग में लाती है।
2. **स्वास्थ्य**- जैव प्रौद्योगिकी की सबसे अधिक उपयोगिता स्वास्थ्य के क्षेत्र में है। इसका प्रयोग करके बहुत कम समय में सस्ता और असुरक्षित टीका तैयार किया जा सकता है।
3. **बायो डायग्लास्टिक किट**- इस किट का प्रयोग करके असाध्य रोगों का पता लगाकर उनका उपचार किया जा सकता है। यह प्रोटीन के उत्पादन में भी मदद करता है, जैसे इन्टरफेरोन (Interferon), इन्सुलिन (Insulin), सोमोट्रापिन (Somotropins) i.e. growth Hormons) आदि। ये बचपन के रोगों जैसे बौनापन, थायरायड से सम्बद्ध रोग आदि का उपचार करने में मदद करते हैं। जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग अनुपलस्य एन्जाइम्स जैसे यूरोकिनेस के उत्पादन में किया जा सकता है। यह रक्त को थक्का जमने (Blood clots) से रोकता है।
4. **औद्योगिक क्षेत्र**- इसमें जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके अल्कोहल का निर्माण विभिन्न अम्लों जैसे- लैक्टिक अम्ल, टार्टेरिक अम्ल, अमीनो अम्ल आदि का उत्पादन दिया जा सकता है। इन अम्लों का प्रयोग दवा बनाने में किया जा सकता है। साथ ही जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग अत्यधिक मात्रा में विटामिन, स्टेरॉइड और एन्टीबायोटिक्स के उत्पादन में किया जा सकता है।
5. **ऊर्जा** - इसमें उत्परिवर्तित सूक्ष्म जीवों का प्रयोग, कचरे, सड़ी हुई सब्जियों में करके अल्कोहल और ऊर्जा प्राप्त किया जा सकता है। जीन का प्रयोग करके नष्ट न होने वाले रासायनिक पदार्थों का जैविक हनन एवं मलवे तथा औद्योगिक बहावों का शुद्धीकरण आदि किया जा सकता है।
6. **पर्यावरण**- जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग प्रदूषण सूचकों का विकास करने, जैविक विक्षालन तथा जैविक खनन आदि में किया जा सकता है। पर्यावरण के प्रदूषण को कम करने हेतु बायोमैग्नीफिकेशन एवं बायोरिमीडिएशन तकनीके विकसित की गयी है।
   - **I. बायोमैग्नीफिकेशन** (Bio-magnification)- अनेक प्रदूषणकारी पदार्थ पारिस्थितिकी तंत्र के खाद्य श्रृंखलाओं (Food Chain) में स्थापित हो जाते है, जिसे **जैव सान्द्रण** (Bio-magnification) कहा जाता है। जैस- BHC, DDT, 2–4D, पारा आदि। ये पदार्थ खाद्य श्रृंखला के द्वारा पौधों व जन्तुओं के शरीर में जाते है और वहीं पर संचित होते रहते है। **इनकी सान्द्रता प्रत्येक ट्राफिक स्तर पर बढ़ती जाती है और उच्च उपभोक्ता में अधिकतम हो जाती है।** कीटनाशक पदार्थ वसा में घुलनशील होते हैं। अत: ये मनुष्यों व जन्तुओं के वसोतक (adipose tissue) में संचित हो जाते हैं श्वसन क्रिया में वसा के ऑक्सीकरण के समय ये पदार्थ रुधिर वाहिनियों में प्रवेश करके विषैली प्रभाव दिखाते है और इससे कैन्सर तक हो जाता है। इसी को देखते हुए कृषि में DDT, BHC, 2-4-D के प्रयोग पर प्रतिबन्ध है।
   - **II. बायोरिमीडिएशन** (Bio-remediation) - **पर्यावरणीय प्रदूषकों को कम करने के लिए जीवित सूक्ष्म जीवों का प्रयोग बायोरिमेडिएशन कहलाता है।** यह एक ऐसी प्रौद्योगिकी है जिसके माध्यम से पर्यावरण से प्रदूषकों को दूर किया जाता हैं। प्रदूषित स्थलों को उनके पूर्व-रूप में लाया जाता है तथा भविष्य में होने वाले प्रदूषण की रोकथाम की जाती है। यद्यपि इसके स्थानीय, क्षेत्रीय एंव वैश्विक प्रयोग भिन्न-भिन्न तरीके से किये जाते हैं तथापि **इस प्रौद्योगिकी का आधार सूक्ष्मजीवों की वह प्राकृतिक अपरिमित क्षमता हैं जिसके माध्यम से जैविक यौगिकों को नष्ट किया जाता है सूक्ष्मजीवों की इस क्षमता का आनुवांशिक रूप से परिवर्तित सूक्ष्मजीवों** (G.M.M.) **का प्रयोग करके बढ़ाया जा सकता है।**

जापान में वैज्ञानिक बड़े पैमाने पर मरूस्थलीकरण को रोकने, वैश्विक जलवायु परिवर्तन को कम करने तथा पदार्थों के जीवन-चक्र को उनके प्राकृतिक रूप में बनाये रखने के लिए बड़े पैमाने पर बायोरिमीडिएशन का प्रयोग कर रहे हैं इस दिशा में ऐसे सूक्ष्मजीवों के विकास का प्रयास किया जा रहा है जो मरूस्थल बनने की प्रक्रिया को उलटने में मदद करे। इसके अलावा **'एल्कजीजीन्स ल्यूटीयस'** से एक **'सुपरबायो अवशोषक'** पैदा किया जा रहा हैं यह एक पॉलीसैकराइड है जो ग्लूकोज और एसिड का बना है। यह अपने से हजारों गुना ज्यादा जल को अवशोषित करके रोके रख सकते है।

जैव प्रौद्योगिकी से हानिः-

1. जीव अभियांत्रिकी का दुरूपयोग करके जैविक तथा रासायनिक हथियार तैयार किया जा सकता है।
2. यदि किसी आरोपित जीन को किसी टॉक्सिन अथवा हानिकारक आता है, और यह रोग का कारण बन जाता है। यह भी सम्भव है कि जैव प्रौद्योगिकी में सम्बद्ध अनुसंधान करते समय वैज्ञानिक से गलती हो जाये, वैसी स्थिति में किया गया वह अनुसंधान मानव जाति तथा अन्य जीवों के लिए भी खतरनाक साबित हो सकता है।
3. यह भी सम्भव है कि अनुसंधान द्वारा विलुप्त जीवों को जिन्दा किया जाए जिसके दुष्परिणामों का अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता है।
4. जैव प्रौद्योगिकी के दुरुपयोग से जैव विविधता और जैविक संसाधनों को क्षरण हो सकता है।
5. **जैव हथियार**- किसी एक विशेष समुदाय पर आक्रमण करने के लिए किसी जैविक हथियार (Biological weapon) को तैयार किया जा सकता है। और इसके प्रयोग से किसी दूसरे समुदाय पर कोई प्रभाव भी नहीं पड़ सकता है। इस प्रकार इससे जातीय भेदभाव (Racial Discrimination) उत्पन्न हो सकता है। साथ ही इससे सामूहिक जनसंहार के लिए हथियार भी तैयार किए जा सकते हैं।

भारत में जैव प्रौद्योगिकी अनुसन्धान

भारत में जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना 1986 में की गई। इस विभाग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैः-

1. असाध्य रोगों का पता लगाने और इनका उपचार करने के लिए बायो डायग्नॉस्टिक किट का विकास करना।
2. समाज के कमाजोर वर्गों के लिए टीकों और इम्युनाइजेशन का विकास करना।
3. भ्रूण प्रत्यारोपण तकनीक का प्रयोग करके पशुओं का विकास करना।
4. नारियल और पाम ऑयल के पौद्यों में ऊतक संवर्द्धन प्रयोग करके तिहलन पदार्थों की उत्पादकता में वृद्धि करना।
5. जैव प्रौद्योगिकी के सहयेाग से प्रजनन क्षमता के विकास को नयंत्रित करना।
6. कृषि क्षेत्र में उच्च उत्पादकता वाली फसलों की किस्मों का विकास करना।

राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास नीतिः- वर्ष 2007 में राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास नीति को अनुमति दी गई जिनके तहत एक राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विनियामक प्राधिकरण का गठन होगा। इस नीति के महत्वपूर्ण तथ्य निम्नवत् हैः-

- स्वतंत्र, स्वायत्व तथा व्यावसायिकता पर आधारित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विनियामक प्राधिकरण का गठन।
- उच्चाधिकार प्राप्त अंतर मंत्रालयी समिति का गठन।
- जैव-प्रौद्योगिकी विभाग के कुल बजट का तीस प्रतिशत भाग सार्वजनिक-निजी सहभागिता पर खर्च करना।
- 11वीं योजना के दौरान जैव-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विश्वस्तरीय संस्थान अनुसंधान क्षमता की मजबूती के लिये 50 विशिष्ट केन्द्रों की स्थापना।
- वैज्ञानिकों के शोध को उपयोगी उत्पादों के रूप में परिणत करने के लिये एक नई राष्ट्रीय पहल करना।
- अभिनव और त्वरित प्रौद्योगिकी तथा उत्पाद विकास को बढ़ावा देने हेतु मुख्य रणनीति के रूप में कल्स्टर विकास पर बल। उन्नत पीएचडी व पोस्ट डॉक्टोरल कार्यक्रम चलाना। स्नातक के नीचे व स्नातकोत्तर स्तरों पर जीवन विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना।

जैव प्रौद्योगिकी में प्रयुक्त तकनीकें

जीन अभियांत्रिकी

इसका अर्थ है जीनों के स्तर पर तकनीक का इस तरह से प्रयोग करना कि इस मनोवांछित संरचना वाले जीन प्राप्त कर सकें। यह जैव तकनीक की सबसे महत्वपूर्ण तकनीक मानी जाती है। इसमें प्राय: एक प्रजाति के आनुवांशिक गुणों वाले जीन को दूसरी प्रजाति के जीन के साथ वांछित मात्रा में संश्लेषित किया जाता है। या एक प्रजाति के जीव दूसरी प्रजाति में प्रत्यारोपित करके मनोवांछित परिणाम प्राप्त किए जाते है।

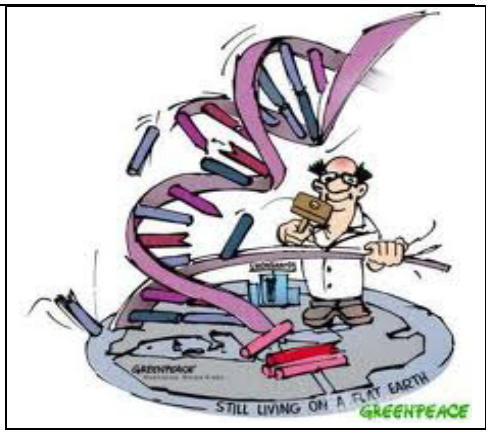

जीनों की स्थिति D.N.A. में होती है इसलिए यह तकनीक D.N.A. के स्तर पर ही कार्य करती है। इसके अन्तर्गत D.N.A. के एक विशेष हिस्से को काटकर दूसरे स्थान पर डालकर उन्हीं गुणों को पहुचाया जाता है। इस प्रकार किसी जीवित वस्तु की जीव संरचना को भी मनोवांछित तरीके से बदला जा सकता है। इस तकनीक के द्वारा ने केवल जीनों के स्वरूप में संशोधन किया जा सकता है। बल्कि नए जीवों को पैदा भी किया जा सकता है। E-Colit सूक्ष्म जीवों को मानव द्वारा ही निर्मित किया गया है।

जीव अभियांत्रिकी में कई प्रकार की तकनीकें प्रयोग की जाती है जिसमें से मुख्य इस प्रकार हैं–

1. **जीनों का विलगन–** इसके अंतर्गत विभिन्न स्रोतों से D.N.A. प्राप्त करके उसका शुद्धिकरण किया जाता है। इसका अर्थ है D.N.A. से उन जीनों को अलग कर लेना जो हमारे उद्देश्य के लिए आवश्यक हैं। इसमें जीनों का चयन करके उन्हें जैव तकनीक के माध्यम से ही काटकर अलग कर दिया जाता है।
2. **जीव संश्लेषण–** इस विधि के अंतर्गत रासायनिक विधियों का प्रयोग करके दो जीनों को जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार D.N.A. पर उपलब्ध जीनों की संरचना में परिवर्तन पैदा किया जाता है।
3. **पुर्नसयुक्त D.N.A.–** जीन अभियांत्रिकी के अन्तर्गत इस तकनीक का विकास 1972 ई० में हुआ और अब यह जीन अभियांत्रिकी की सबसे महत्वपूर्ण तकनीक मानी जाती है। इसके अंतर्गत किसी D.N.A. अनुक्रम को रिस्ट्रक्शन एंजाइम की सहायता से वंछित स्थान से काटा जाता है। तब किसी दूसरे D.N.A. अनुक्रम के एक भाग को वहां जोड़ा जा सकता है। अतः इस तकनीक के द्वारा किसी बाहरी D.N.A. को 'आर्गेनिस्म' में प्रविष्ट कराया जाता है। इस नए बनने वाले D.N.A. को Recombinant D.N.A. कहते हैं तथा इससे बनने वाले जीव को Transgenic Organism कहते हैं। Transgenic organism, Hybrid organism से अलग होते है। जब तुलनात्मक लक्षणों वाले नर तथा मादा के बीच निषेचन कराया जाता है तो उससे उत्पन्न हुई संतानों को Hybrid Organism कहते हैं। यहां देखने की बात यह है कि इस प्रक्रिया अलग-अलग D.N.A. को वांछित पद्धति से जोड़कर बनाए गए Recombinant D.N.A. Transgenic Organism बनाते हैं 'एस्ट्रिड' नाम का सुअर अंग प्रत्यारोपण की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण माना जाता है।
4. **P.C.R. (Polymers Chain Reaction)**– यह एक ऐसी तकनीक है जिसे जीव प्रवर्द्धन के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस तकनीक की सहायता से कुछ ही समय में D.N.A. अनुक्रम की लाखों अनुकृतियां बनाई जा सकती है। वस्तुतः जैव प्रौद्योगिकी के लिए कोई भी प्रयोग करते हुए इस बात की आवश्यकता होती है कि वैज्ञानिकों के पास किसी खास जीव की जीन संरचना से एक जैसे कई प्रतिदर्श उपलब्ध हों ताकि बार-बार प्रयास करके सफल निष्कर्ष तक पहुँचा अनुक्रम पर भी लागू किया जा सकता है तथा उसके किसी मिश्रित भाग पर भी। जैव प्रौद्योगिकी को वर्तमान स्तर तक लाने में इस तकनीक की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है।
5. **जीन मानचित्रीकरण (Gene Mapping)**- इसका अर्थ है शरीर में विद्यमान जीनों का पूरा नक्शा तैयार कर लेना। इसके अंतर्गत दो तथ्यों का ज्ञान होना आवश्यक है। प्रथम यह कि जीव में कुल कितने जीन हैं तथा किस क्रम में स्थित हैं। दूसरा यह कि जीन किस विशेष कार्य से सम्पन्न रहता है। इस पूरी संरचना को जीनोम भी कहा जाता है।

जीन

मानव शरीर की सबसे छोटी क्रियात्मक ईकाई जीन कहलाती है यह DNA में हजारों क्षारों से मिलकर बनी होती है। और यही जीन संयुक्त होकर क्रोमोजोम का निर्माण करते है वास्तव में ये जीन श्रृंखला वह निदेश क्षेत्र है जो कोशिकाओं को प्रोटीन एकत्र करने में मदद करता है। और ये प्रोटीन कोशिकाओं को कार्य करने मजबूत करने और बहुगुणित होने में मदद करता है।

जीन DNA का वह शेष भाग है जिसमें आनुवांशिक कोड निहित रहता हैं जीन में दो प्रकार के नाइट्रोजनी क्षार प्यूरिन और पिरिमिडीन होते है जिसमें प्यूरिन के अन्तर्गत एडिनिन (A) व गुआनिन (G) तथा पाइरीडिशीन में थाइमीन (T) व साइटोसीन (C) नामक क्षार आते है। इनकी विशेषता यह है कि A सदैव T के साथ तथा G सदैव C के साथ युग्मित होता है। इन क्षारों पर जैव रसायनिक संकेत होते है निके अध्ययन से मनुष्य सम्बन्धी प्रत्येक जानकारी को प्राप्त किया जा सकता है।

मानव जीनोम परियोजना (Human Genome Project)

अमेरिका के एनर्जी विभाग (U.S.D.E.) तथा नेशनल इंस्टीट्यूटस ऑफ हेल्थ (NIH) की भागीदारी से 1988 में मानव जीनोम परियोजना आरंभ हुई। अठारह देशों की लगभग दो सौ पचास प्रयोगशालाएँ इस अनुसंधान कार्य में लगी हुई है। इस महत्वपूर्ण परियोजना के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए गए थे-

1. मनुष्य के डी.एन.ए. के लगभग 1 लाख जीनों की पहचान करना।
2. मनुष्य के डी.एन.ए. बनाने वाले लगभग 3 अरब 20 करोड़ क्षारकों का निर्धारण कना।
3. सूचनाओं को डाटाबेस में संचित करना।
4. अधिक तेज और कार्यक्षम अनुक्रमिक प्रौद्योगिकी का विकास करना।
5. आँकड़ों के विश्लेषण के लिए टूल्स विकसित करना।
6. परियोजना से उठने वाले नैतिक, विधिक और सामाजिक मुद्दों का निराकरण करना।

प्रत्येक कोशिका के गुण-सूत्र में मौजूद डी.एन.ए. के 4 क्षारकों के अनुक्रम का पता लगाना ही मानव जीनोम परियोजना का मुख्य उद्देश्य था। दुनिया भर के वैज्ञानिक इस प्रयास में लगे हैं। कि मानव सहित अन्य जीवों की जीन संरचना को निश्चित रूप से जान सकें।

वस्तुत: प्रत्येक जीन Amino Acids के माध्यम से विशेष प्रकार के प्रोटीन बनाने के लिए जिम्मेदार होते हैं और यदि यह जाना जा सके कि कौन सा जीव किस प्रोटीन के निर्माण के लिए जिम्मेदार है तो मानव की प्राय: सभी आनुवांशिक एवं जैविक समस्याओं का निदान हो सकता है।

लाभ:-

1. इससे लगभग 6 हजार प्रकार के आनुवांशिक रोगों की पहचान तथा निदान का रास्ता खुल जाएगा। यही नहीं प्रत्येक की जीन संरचना की विशेष स्थितियों को देखते हुए उसके लिए विशेष प्रकार की चिकित्सा की व्यवस्था की जा सकेगी।
2. ह्यूमन जीनोम प्रोजेक्ट में स्पष्ट रूप में कहा गया है कि मानव की विभिन्न प्रजातियों में ऐसे कोई आनुवांशिक अंतर नहीं हैं जिनके कारण उन्हें ऊँचे तथा नीचे क्रम में रखा जा सके। इस प्रकार श्रेष्ठता का भ्रम इस प्रयोग से खण्डित हुआ है।
3. अपराध विज्ञान के क्षेत्र में यह अध्ययन काफी प्रामाणिक हो सकता है। यदि अपराध का कारण किसी न किसी मात्रा में मनुष्य के आनुवांशिक तत्व हैं या हार्मोन असंतुलन है तो आने वाले समय में अपराध के इस कारण को पूरी तरह से समाप्त किया जा सकेगा।
4. नि:संतान दंपत्तियों के लिए संतान प्राप्त करने की संभावनाएं बन सकेगी।
5. कृषि के क्षेत्र में ऐसी फसलें बनाई जा सकेगी जो अपने सामान्य के साथ-साथ कुछ विशेष गुणों को धारण करेंगी। उदाहरण– हाल ही में बताया गया गोल्डन राइस स्वाद के साथ-साथ विटामिन की कमी को भी पूरा करता है।
6. बुढ़ापे तथा मृत्यु आदि पर विजय पाई जा सकेगी।
7. मानव जीनोम विभिन्न मानव समुदायों के प्रवासन (Migration) के अध्ययन में मदद करेगा।
8. जिनोमिक्स की जानकारी से मानव के विकास और अन्य जीवों के साथ हमारे सम्बन्धों को समझने में सुविधा होगी।
9. किसी बच्चे के वास्तविक माता-पिता के निर्धारण में (Parentage) यह मदद करेगा।
10. अंग प्रत्यारोपण कार्यक्रम के अन्तर्गत **दानकर्ता** और **Recipient** के अंगों को मिलाने में मानव जीनोम में मानव मदद करेगा।

हानि:-

1. जैव विविधता को नुकसान।
2. जैव हथियारों का संभावित खतरा।
3. सुजनिकी के कारण डिजाइनर बेबी प्रचलन होने की संभावना।
4. मृत्यु पर रोकथाम के कारण जनसंख्या वृद्धि की संभावना।
5. आयु के अधिक बढ़ने में पीढ़ी अंतराल जैसी समस्याओं का और मुखर होना।
6. आर्थिक असमानताएं इस तकनीक के प्रयोग की विषमतापूर्ण संभावनाओं को जन्म देंगी जो आगे चलकर इन विषमताओं को और बढ़ाएंगी।
7. खराब जीन (Bad genes) को हटाए जाने से मानव की एक प्रजाति के रूप में विकास को खतरा उत्पन्न हो सकता है।
8. मानव जीनोम को डिकोड किए जाने तथा किसी भी व्यक्ति की आनुवंशिक जानकारी के कारण आनुवंशिक गोपनीयता का हनन होना सम्भव है। आनुवंशिक जानकारी के आधार पर स्वास्थ, रोजगार और बीमाक्षेत्र में किसी व्यक्ति से आसानी से भेदभाव किया जा सकता है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति से आसानी से भेदभाव किया जा सकता है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति को आनुवंशिक सूचना के आधार पर अच्छे पद पर नियुक्त किया जा सकता है।
9. मानव अनुवंशिक कोड को तोड़ने से अमीर तथा गरीब देशों तथा अमीरों और गरीबों के बीच अन्तर बढ़ सकता है। बहुत महँगी दवाएँ बनाकर गरीबों का भेदभाव किया जा सकता है, चूकि महँगी दवाएँ सिर्फ अमीर लोग ही खरीदने में समर्थ होंगे।
10. आनुवंशिक सूचना के भयावह परिणाम हो सकते है। जैसे समाज में शारीरिक तथा मानसिक रूप से कमजोर लोगों के लिए कोई स्थान नहीं रहेगा।
11. इस शोध के कारण मनचाहे बच्चे पाने की चाह में भ्रूण हत्या और गर्भपात की दर में खासा इजाफा हो सकता है।
12. किसी एक विशेष समुदाय आक्रमण करने के लिए किसी जैविक हथियार (biological weapon) को तैयार किया जा सकता है और इसके प्रयोग से किसी दूसरे समुदाय पर कोई प्रभाव भी नहीं पड़ सकता है। इस प्रकार, इससे जातीय भेदभाव (Racial Discrimination) उत्पन्न हो सकता है। साथ ही इससे सामूहि जनसंहार के लिए हथियार भी तैयार किए जा सकते है।

D.N.A. Fingure Printing

D.N.A. Fingure Printing, D.N.A. के माध्यम की पहचान करने की तकनीक है जिसका प्रयोग आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी में किया जाता है। जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति की उंगलियों के चिह्न अलग होते हैं। उसी प्रकार उसके D.N.A. की संरचना भी सबसे अलग होती है।

प्रत्येक व्यक्ति के D.N.A. में बहुत से लक्षण समान होते हैं जबकि कुछ विशेष होते हैं। इन विशेष लक्षणों को **जंक D.N.A.** भी कहा जाता है। वस्तुत: D.N.A. में चार क्षार होते हैं (एडीनिन, थाईमिन, गुआनिन और साइटोसिन) जो अलग प्रकार के क्रम बनाते हैं। इन्हीं क्रमों की पहचान से व्यक्ति की पहचान की जा सकती है। चूंकि यह एक शरीर की प्रत्येक कोशिका में विद्यमान होता है इसलिए किसी व्यक्ति के शरीर की एक कोशिका भी मिलने पर यह तकनीक प्रयोग में लाई जा सकती है।

D.N.A. Fingure Printing की तकनीक काफी जटिल मानी जाती है। इससे अपराधियों के D.N.A. के रक्त, बाल, चर्म या किसी भी अंग से प्राप्त किया जा सकता है। सबसे पहले उस नमूनों की क्रिया प्रोटोमेज नामक एन्जाइम से कराई जाती है। जिससे D.N.A. से संयुक्त सभी ऊतक अलग हो जाते हैं। उसके बाद शेष बचा D.N.A. प्राप्त होता है। इसके बाद उन्हें रेस्ट्रिक्शन एन्जाइम की मदद से कारगर ढंग से पढ़ा जाता है।

D.N.A. Fingure Printing एक बेहद सफल तकनीक है जिसका प्रयोग हत्या, बलात्कार तथा संपत्ति जैसे विवादों में तो अक्सर होने लगा है, साथ ही विज्ञान के संरक्षण आदि के लिए इसका प्रयोग होने लगा है। यह तकनीक Identical Twins को छोड़कर सभी पर लागू होती है क्योंकि उनकी D.N.A. संरचना समान होती है।

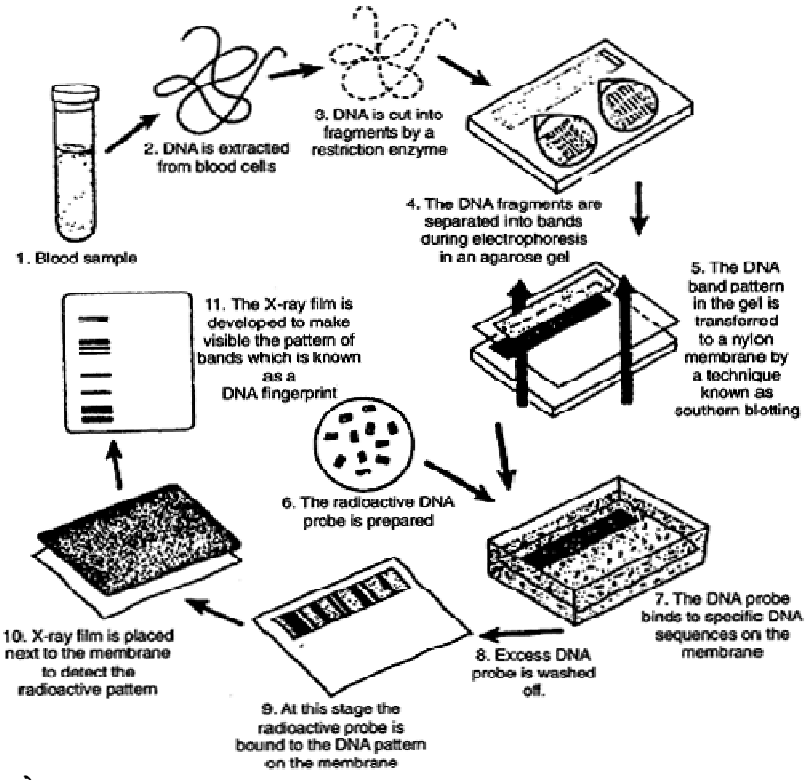

डी.एन.एन. फिंगर प्रिंटिंग के लाभ

1. जैविक सबूतों के आधार पर अपराध जैसे खून, बलात्कार अनुसन्धान क्रम में वास्तविक अपराधी को पकड़ने के लिए।
2. वंशानुगत बीमारियों की पहचान करने और उनके लिए चिकित्सा पद्धति का विकास करने के लिए।
3. बच्चे के वास्तविक माता-पिता के निर्धारण के लिए।
4. पैतृक सम्पत्ति सम्बन्धी दावों को निपटाने के लिए।
5. यह शुद्ध पीड़ितों, सैनिकों के लाशों को पहचानने में मदद करेगा। विशेषत: तब जब उनकी लाश म्युटेट (परिवर्तित) हो गई हो।

D.N.A. Fingure Printing से आजकल होने वाली फसलों हेतु बीजों की गुणवत्ता में धोखाधड़ी को रोकने हेतु कृषि मंत्रालय द्वारा एक तकनीक विकसित की जा रही हैं। इस तकनीक के तहत् बढ़िया गुणवत्ता वाले बीजों के फिंगर प्रिंट्स लेकर डाटा बेस तैयार किया जाता हैं अगर अगर किसी भी बीज की गुणवत्ता की जांच करनी हो तो उसके फिंगर प्रिंट का डाटा बैंक से मिलान किया जाता है। जांच के नतीजे अमूमन तीन दिन में मिल जाते है।

D.N.A. Fingure Print की तकनीकी का विकास 1985-86 में England में हुआ तथा यह तकनीक तेजी से सभी विकसित देशों में प्रचलित हो गई। भारत मे वर्तमान समय में इसका प्रयोग हैदराबाद के Centre for Cellular and Molecular Biology में होता है।

कृत्रिम डी. एन. ए.

कृत्रिम DNA का निर्माण सर्वप्रथम जनवरी, 2000 में टेक्सास विश्वविद्यालय में किया गया। इसे **सिन्थेटिक आर्गेनिज्म-1** के नाम से जाना जाता है जिसके कार्यों का कोई पता नहीं है। यह मानव द्वारा निर्मित DNA की लम्बी श्रृंखला है जिसमें हजारों क्षार युग्म (Base Pairs) है। सिन्थेटिक ऑर्गेनिज्म-1 एक माइक्रॉब (Microbe) है जिसके कार्यों की कोई जानकारी नहीं है।

लाभ:-

इस तकनीक का प्रयोग **डिजाइनर बग** (Designer Bugs) की श्रृंखला का निर्माण करने के लिए किया जा सकता है, जिसकी लक्षित ऊतक (targeted tissue) पर प्रभाव करने की प्रक्रिया अति कुशल होगी (Super Effiient Mechanism)। जैसे कैंसर, ट्यूमर आदि के ऊतको को नष्ट करने में। इसका प्रयोग मानवीय आँत (Human Intestine) पर प्रभाव डालने के लिए भी किया जा सकता है जिससे यह **विटामिन-सी** को उत्पादित कर सके।

हानियाँ:-

कृत्रिम DNA का सबसे बड़ा खतरा यह है इससे एक **माइक्रॉब मास्टर रेस** (Microbe Master Race) का जन्म हो सकता है जो मानवों तथा जन्तुओं को एक खतरा उत्पन्न कर सकता है तथा इसका प्रभाव पय्यावरण पर भी पड़ सकता हैं अनुसन्धान एवं विकास के इस चरण में **म्यूटेशन** (mutation) के रूप में होने वाले खतरनाक परिणामों का अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। ठीक इसी प्रकार, कृत्रिम ऑर्गेनिज्म के मानव जाति और पर्यावरण पर होने वाले दुष्परिणामों का भी अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता है।

नेशनल DNA डाटाबेस

भारत में राष्ट्रीय DNA डाटाबेस का निर्माण करने के लिए एक कानून बनाने की योजना सरकार बना रही हैं। राष्ट्रीय DNA डाटाबेस के लिए देश में छह क्षेत्रीय प्रयोगशालाएं क्रमशः कोलकत्ता, चंडीगढ़, हैदराबाद, भोपाल, पुणे और गुवाहाटी में स्थापित की जाएगी। ज्ञातव्य है कि 11वीं पंचवर्षीय योजना में इस तरह के डाटाबेस तैयार करने के लिए 42.6 करोड़ रुपये का प्रावधाान किया गया है। इस डाटाबेस का उद्देश्य होगा-दोषी, आरोपी संदिग्धों की प्रोफाइल के साथ-साथ अपराध स्थल से प्राप्त सामग्रियों को संकलित करना। वर्तमान में भारत में ऐसा कोई भी कानून नहीं है, जो सरकार को दोषियों के DNA प्रोफाइल संग्रह और भंडारण की शक्ति प्रदान करता हो। मुख्यतः हत्या, लैंगिक उत्पीड़न एवं डकैती जैसे अपराधों से जुड़े अपराधियों की DNA प्रोफाइल तैयार करने पर बल दिया जाएगा। सामान्यतया हत्या और लैंगिक उत्पीड़न के मामले में यह देखा गया है, कि अपराधियों में दोषी सिद्ध नहीं होने पर ऐसे अपराध को दुहराने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

यदि किसी अपराधी की DNA प्रोफाइल एक बार तैयार कर लिया जाता है, तब अगली बार ऐसे ही अपराध होने पर डाटाबेस में जाकर DNA मैच कराया जाता है। अर्थात् इस DNA डाटाबेस से न केवल अपराधी को पकड़ा जा सकता है। बल्कि दोषसिद्धि (Conviction Rate) को भी बढ़ाया जा सकता हैं। उल्लेखनीय है कि मानव शरीर की लगभग प्रत्येक कोशिका में DNA (Deoxyribouncleic Acid) होता हैं, जो आनुवांशिक सूचनाओं से युक्त होता हैं यह DNA इंसान के भौतिक चरित्र को निर्धारित करता हैं। अपराध विज्ञान के तहत् अपराध स्थल से प्राप्त रक्त, लार एवं वीर्य जैसे जैविक तत्वों के विश्लेषण के द्वारा अपराधियों तक पहुँचा जाता है।

जीन चिकित्सा

जीन चिकित्सा से तात्पर्य किसी आनुवांशिक रोग से सम्बन्धित जीव की चिकित्सा करने से है। सामान्य रूप से चिकित्सक जिन रोगों की चिकित्सा करते हैं वह केवल उन कारणों से होती है जो मनुष्य को बाहरी पर्यावरण से प्रभावित करते हैं। सामान्य चिकित्सा में आनुवांशिक रोगों का प्रायः इलाज नहीं हो पाता है तथा कोशिका यह की जाती है कि उनके नकारात्मक प्रभाव को यथासंभव कम किया जा सके। इस दृष्टि से जीन चिकित्सा, चिकित्सा के क्षेत्र का अगला चरण है।

जीन चिकित्सा के अंतर्गत तीन प्रकार की तकनीकें सामान्यतः शामिल की जाती है -

1. रोगी जीन का स्वस्थ जीन से स्थानांतरण
2. जीन टारगेटिंग के माध्यम से रोगी जीन को ठीक करना।
3. जीन संवर्द्धन की तकनीक का प्रयोग करना जिसमें जीन की विकसित प्रतिलिपियां बनाई जाती हैं तथा प्रक्रिया को ऐसे बिंदु पर रोकना जहां की संरचना का दोष समाप्त हो गया हो।

इन तीनों को सम्मिलित रूप से जीन चिकित्सा कहा जाता है।

जहां तक जीन चिकित्सा के पहले विकल्प अर्थात् जीन स्थानांनतरण का प्रश्न है वह अभी तक केवल संभावना के स्तर पर संभव है कि किन्तु शेष दोनों विधियां प्रयोग में लाई जा रही हैं। जीन चिकित्सा का प्रयोग दो स्तरों पर किया जाता है–

1. भ्रूण के स्तर पर अर्थात् बनने के बाद किंतु जीव के जन्म लेने से पहले।
2. रोगी के स्तर पर अर्थात् जीव के जन्म लेने के बाद।

जीन चिकित्सा की तकनीकों को प्रयोग करने की कोशिश की दो विधियां हैं जिन्हें क्रमशः (Ex Vivo तथा In-Vivi) कहते हैं।

Ex-Vivo विधि के अंतर्गत लक्षित कोशिका को बाहर निकालकर उसमें वांछित जीन को डाल दिया जाता है तथा कोशिका को पुनः जीव में प्रत्यारोपित रखे रोग का निदान किया जाता है। इसके लिए कोशिका संवर्द्धन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इसके विपरीत In-Vivi तकनीक में चिकित्सकीय जीन को सीधे रोगी के शरीर में प्रत्यारोपित किया जाता है। जीन उपचार का प्रयोग **ड्रग डिलीवरी सिस्टम** (Drug Delivery System) के रूप में भी किया जा सकता है। वैसा जीन जो एक लाभदायक उत्पाद बनाता है, को रोगी की कोशिका के DNA में प्रवेश कराकर लाभदायक उतपाद तैयार कराया जा सकता है। जैसे-रक्त तन्त्रिकाओं की चिकित्सा (Blood Vessels Surgery) के समय, वैसे जीनों को, जो रक्त का थक्का जमने से रोकते है, का तन्त्रिका की कोशिका के DNA में प्रवेश करवा कर रक्त को जमने के खतरे को रोका जा सकता है।

जीन चिकित्सा वर्तमान समय में प्रायः प्रयोगशालाओं तक ही सीमित है। इसकी सफलता की संभावनाएं अभी पूरी तरह सामने नहीं आई है। तथा अनुसंधान के स्तर पर होने के कारण यह तकनीक बहुत महंगी भी है। आशा की जाती है कि निकट भविष्य में 6000 से अधिक आनुवांशिक रोगों तथा AIDS जैसे अन्य खतरनाक रोगों से मुक्ति प्राप्त करने में यह तकनीक क्रांतिकारी साबित होगी।

कोशिका के स्तर पर जैव प्रौद्योगिकी

कोशिका संलयन (हाइब्रिडोमा)

मानव या अन्य जीवों में रोग से बचाव के लिए प्रायः दो तरीके अपनाए जाते हैं–

1. **रोग के विषाणुओं तथा जीवाणुओं को रोग होने के बाद नष्ट करना।**
2. **रोग से पूर्व ही जीवाणुओं तथा विषाणुओं से रक्षा कर लेना।**

जहां तक पहले तरीके का प्रश्न है इसके लिए कई प्रकार की दवाओं का इस्तेमाल किया जाता है। जिसमें प्रति जैविक (Anti Biotics) का विशेष स्थान है जो शरीर में विद्यमान प्रत्येक बैक्टीरिया को मार देता है तथा इसी प्रक्रिया में रोग के Bacterial कारक भी मारे जाते हैं।

कभी-कभी किसी Antigen में तेजी से बढ़ने और प्रभावित करने की क्षमता मौजूद होती है जिसके कारण Antibodies के बनने से पूर्व ही जीवन संकट में पड़ जाता है। इसके निदान के लिए जो व्यवस्था की जाती है उसे टीका (Vaccine) कहते हैं। टीका वस्तुतः

मरे हुए या निष्क्रिय Antigen के समूह को ही कहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पोलियों का टीका वस्तुत पोलियों के विषाणु का ही निष्क्रिय रूप है जो मनुष्य के शरीर तंत्र उन्हें पहचान कर उनके लिए Anti Bodies का निर्माण कर लेता है। ऐसी स्थिति में भविष्य में जब भी वह Antigen शरीर में संक्रमित होता है उसके खिलाफ पहले से Antibodies तैयार रहती हैं तथा उसके प्रभावों से जीव सुरक्षित रह पाता है।

Antigen या Pathogen से लड़ने की यह प्रक्रिया सामान्यत: जीवाणुओं तथा विषाणुओं के स्तर पर चलती है किंतु जैव प्रौद्योगिकी में कई बार यह प्रयास किया गया कि इस प्रक्रिया को और सूक्ष्म स्तर पर लाया जा सके ताकि शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को कोई हानि न हो। इसके अंतर्गत सामान्य कोशिकाओं में रोगों से युक्त कोशिकाओं से संलयित करके ऐसी कोशिकाएं बनाई जाती हैं जिनमें रोगों की पहचान के लक्षण भी मौजूद हों। इन्हीं कोशिकाओं को हाइब्रिडोमा या Fionoclonal Antibodies कहा जाता है। जब वह किसी जीव में प्रविष्ट होती है तो वायरस, बैक्टीरिया तथा सूक्ष्म जीवों के कारण प्राय: होने वाले रोगों की पहचान शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र से करा देती है जिसमें शरीर पहले से Antibodies का निर्माण कर लेता है। रोगों के निदान के स्थान पर रोगों से सुरक्षा अधिक बल देने के कारण यह तकनीक वर्तमान में एक श्रेष्ठ तकनीक मानी जाती है।

क्लोनिंग

क्लोनिंग एक ऐसा जीव है जो अलैंगिक विधि द्वारा एकल जनक (माता या पिता) से विकसित होता है। यह केवल शारिरीक गुणों में नहीं बल्कि आनुवांशिक गुणों में भी अपने जनक के समरूप होता है। वास्तव में यूँ ही कहा जाता है कि क्लोन अपने जनक की पूर्ण प्रतिलिपि होता है जबकि कोई सामान्य जीव अपने माता तथा पिता दोनों के मिश्रित गुणों से विकसित होता है।

क्लोनिंग के लिए सामान्य दो विधियों का प्रयोग किया जाता है:-

1. **भ्रूण विलगन विधि (Ebryo Separation)**
2. **नाभिकीय अंतरण विधि (Nuclear Transfer Technique)**

1. **भ्रूण विलगन विधि (Ebryo Separation):-** इस तकनीक में जन्म लेने वाली संतान एकल Parent से उत्पन्न नहीं होती है। इसके स्थान पर इस प्रक्रिया में जन्म लेने वाले दो जीव एक दूसरे के क्लोन होते हैं। इस तकनीक को सामान्य भ्रूण को आरंभिक अवस्था में ही दो भागों में बाँटा जाता हैं जिससे दो अलग-अलग जीव जन्म लेते हैं। चूंकि मूल रूप से ये एक ही D.N.A. या जीव संरचना से बने होते हैं इसलिए ये दोनों एक-दूसरे के समरूप होते हैं।
2. **नाभिकीय अंतरण विधि (Nuclear Transfer Technique):-**इस तकनीक के अंतर्गत कोशिका के नाभिक को भौतिक रूप से निकाल लिया जाता है तथा उसे नाभिक रहित अंडाणु में प्रविष्ट करा दिया जाता है। इसके बाद विद्युत में हल्की तरंगों के माध्यम से निषेचन कराया जाता है तथा जब यह अंडाणु पूरी तरह विकसित हो जाता है। तब उसे प्रति नियुक्त मादा के गर्भ में स्थानांतरित कर दिया जाता है। इसके बाद सामान्य प्रक्रिया से बच्चे का जन्म होता है। 1997 में डॉली नामक क्लोन भेंड इसी तकनीक से बनाया थी।

नाभिकीय अंतरण तकनीक का ही एक विकसित रूप अभी हाल ही में सफल हुआ है जिसे होनोलुलू तकनीक कहते हैं। इसमें विशेष बात यह है कि नाभिकीय अंतरण के बाद क्लोन कोशिका का कई भागों में विभाजन करके एक साथ कई क्लोन विकसित किए जाते हैं। हाल ही में एक प्रयोग में चूहे के 50 से अधिक क्लोन एक साथ विकसित किए गए है।

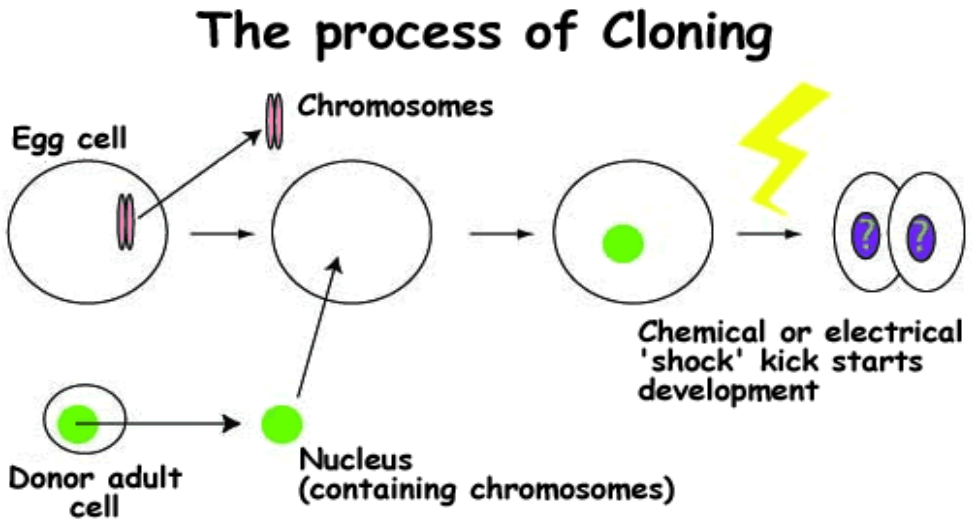

क्लोनिंग मुख्यत: दो प्रकार की होती है:-

1. **Reproductive Cloning / Human Cloning:-** इसके लिए भ्रूण अवस्था का प्रयोग किया जाता हैं जिसके द्वारा एक सम्पूर्ण जीव का निर्माण किया जा सकता है।
2. **Therepathic Cloning:-** यदि कोशिका की प्रयोगशाला स्तर पर विभाजित होने दे तो इसे चिकित्सा क्लोनिंग कहा जाता हैं। इसकी मदद से किसी विशेष कोशिका का उत्तक या विशेष अंगों का निर्माण किया जाता हैं जिसके द्वारा किसी भी तरह की असाध्य व आनुवांशिक बीमारियों को दूर किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में भ्रूण को प्रयोगशाला में विभिन्न कोशिकाओं में विभाजित होने दिया जाता है तथा उसका उपयोग Adult Stem Cell के रूप में किया जाता जा रहा है।

समस्याए :-

1. सफलता की दर काफी कम, डाली को बनाने में लगभग 270 बार प्रयास करना पड़ा था।
2. क्लोन में उम्र बढ़ने की गति सामान्य जीव की तुलना में काफी तेज हो सकती है।

लाभ:-

1. ऊतक संवर्द्धन की प्रक्रिया उन पौधों के लिए अधिक उपयोगी है जिनके बीज बहुत कम और बहुत धीरे-धीरे निकलते है। जैसे चन्दन और रबर के पेड़। ये पौधे बाँस के पौधों की तुलना में विकसित होने, बढ़ने में काफी समय लगाते हैं। क्लोनिंगके द्वारा ऐसे पौधों की वृद्धि तेजी से की जा सकती है। व्यावसायिक फसलों जैसे गन्ना और हल्दी को प्रत्यारोपण (Grafting) द्वारा लगाने में बहुत समय लगता है। इन पौधों की तेजी से वृद्धि **इन-विट्रो क्लोनिंग तकनीक** (Invitro Cloning Technique) को अपनाया जा सकता है।
2. ऊतक संवर्द्धन की प्रक्रिया को पौधों की वृद्धि, रोग-निरोधक व रसायन-प्रतिरोधी क्षमता को उपयुक्तता प्रदान करने के लिए भी किया जाता हैं।
3. ऊतक संवर्द्धन की सर्वाधिक लाभप्रदा विशेषता यह है कि इसके द्वारा विभिन्न जलवायुविक एवं प्रतिकूल कृषि मौसम दशाओं में उत्पादकता प्रदान करने वाली पादप-प्रजातियों का विकास किया जा रहा है। जैसे इसके द्वारा मरुस्थल में जल्दी से बढ़ने वाले पादपों की किस्मों को तैयार करना।
4. राष्ट्रीय महत्व के वन-वृक्षों की फसल के विकास में ऊतक संवर्द्धन तकनीक की प्रभावी माना गया है।
5. इससे सम्बद्ध होने वाले अनुसन्धान से मानवीय उम्र वृद्धि की प्रक्रिया के कारणों को जाना जा सकता है तथा इस प्रयोग को रोका भी जा सकता है।
6. मानव क्लोनिंग से सम्बद्ध अनुसन्धान से यह समझने में सुविधा होगी कि क्यों कोई वयस्क कोशिका अपने एम्ब्रयोनिक (Embryonic) चरण या प्रारम्भिक चरण में चला जाता है और फिर गुणित होने लगता है जिससे **कैंसर** होता है। अत: इससे कुछ प्रकार के कैंसरों का उपचार ढूँढ़ा जा सकता है।

हानियाँ:-

1. यह वर्तमान सामाजिक संरचना जैसे परिवार, विवाह, पारिवारिक सम्बन्ध आदि को नष्ट कर सकता है।
2. इसके कारण मानव की जनसंख्या में विविधता नहीं रह पाएगी।
3. इसका प्रयोग **क्लोन सेना** (Clone Army) बनाने के लिए किया जा सकता है। इससे जातीय शोषण तथा भेदभाव भी बढ़ सकता है।
4. चिकित्सकों द्वारा भी इसका दुरुपयोग किया जा सकता हैं। जैसे किसी अंग के प्रत्यारोपण (Organ Transplantation) के लिए।
5. वर्तमान समय में होने वाले अनुसन्धानों और विकास के आधार पर भविष्य में होने वाले कुप्रभावों का अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता है। इससे मानव जाति का वर्ग परिवर्तन हो सकता है। या इस पर खतरनाक प्रभाव पड़ सकते है।
6. मानव क्लोनिंग पर होने वाले अनुसन्धान एंव विकास को मॉनीटर करने हेतु विधि बनाना तथा उसे लागू करना बहुत की कठिन है।
7. व्यक्ति की पहचान करना कठिन हो सकता है।
8. मानव क्लोनिंग की स्थिति में मानवाधिकारों के हनन की संभावना है।
9. अपराध आदि के बढ़ने की संभावना।

ऊतक संवर्द्धन (Tissue Culture)

जटिल या विकसित जीवों में कई अलग-अलग प्रकार की कोशिकाएं होती है। एक प्रकार की कोशिका के समूह को ऊतक कहा जाता है। ऊतक संवर्द्धन का अर्थ है प्रयोगशाला में नियंत्रित स्थितियों में समान कोशिकीय जीवों का सम्पूर्ण विकास करना तथा जटिल कोशकीय जीवों के ऊतकों का विकास करना। इस प्रक्रिया से मूलत: लाभ यह होता है कि किसी निश्चित उद्देश्य के लिए विशेष प्रकार की जीन संरचनाओं से कोशिकाओं का चयन करके अपेक्षाकृत अनुकूल स्थितियों तथा कम समय में उसका विकास कर लिया जाता है। इस तकनीक का प्रयोग मानव या अन्य प्राणियों के संदर्भ में कम, कृषि विज्ञान में अधिक होता है। भारत में इस क्षेत्र में काफी विकास किया गया है। पूसा संस्थान, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) तथा TERI में इस क्षेत्र में काफी काम लिया गया है। बांस की तीन प्रजातियों में काफी कम समय में फूल खिलाने की प्रणाली विकसित की गई है। रेशम की उत्पादकता बढ़ाई जा चुकी है तथा धान, मक्का, नींबू, आलू व केले के उत्पादन में विशेष रूप से काफी सफलताएं प्राप्त हुई है।

अंग प्रत्यारोपण

मानव शरीर में किसी अन्य प्राणी के अंगों से प्रत्यारोपित करने की विधि को अंग प्रत्यारोपाण कहते है। वस्तुत: यह एक कठिन प्रक्रिया है क्योंकि शरीर का प्रतिरक्षा तंत्र बाहर के तत्वों को प्राय: स्वीकार नहीं करता है। प्रतिरक्षा तंत्र में कॉम्प्लीमेन्ट (Compliment) नामक एक तत्व होता है जो बाहरी तत्वों की तुरंत पहचान कर लेता है तथा शरीर उसके खिलाफ Antibodies का निर्माण करने लगता है। इस कारण शरीर की प्राकृतिक प्रणाली बाधित होने लगती है तथा कई समस्याएं पैदा हो जाती है। यहां तक कि मृत्यु भी हो सकती है। जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत जीन अभियांत्रिकी की मदद से ऐसे प्रयास किए जा रहे हैं कि अंग प्रत्यारोपण संभव हो सके। इसके लिए कुछ ऐसे जीव-जन्तुओं का विकास करने का प्रयास किया गया है जिनके अंग प्रत्यारोपण की स्थिति में Compliment सक्रिय न हो तथा शरीर बाहरी अंग को स्वीकार कर ले। इस उद्देश्य के लिए जो Transgenic Organism सबसे पहले बनाया गया था, वह एस्ट्रिड नाम का एक सुअर था जिसके बारे में यह संभावना थी कि उसके अंग आरोपित किए जाने की स्थिति में मानव शरीर प्रतिरोध नहीं करेगा। अभी इस क्षेत्र में और विकास करने की आवश्यकता है।

परखनली शिशु

परखनली शिशु (Test Tube Baby) नाम्नी संबोधन एक भ्रांत धारणा है क्योंकि परखनली शिशु का जन्म परखनली से नहीं होता है। गर्भधारण का काम तो मां ही कर सकती है। ऐसा गर्भधारण (Conception) एक कांच की प्लेट में संपन्न होता है। अतः इसे **आई.वी.एफ.** (In Vitro Fertilisation) कहना अधिक युक्तिसंगत है। लैटिन भाषा में कोच को 'विट्रो' कहा जाता है।

इस विधि में गर्भधारण में अक्षम किसी भी स्त्री की अंड कोशिका/डिंब (egg cell) को निकालकर उसके शरीर से बाहर शुक्राणु (sperm) द्वारा निषेचित किया जाता है और फिर उसे गर्भाशय में आरोपित कर दिया जाता है। आई.वी.एफ. तकनीक उन्हीं महिलाओं में प्रयुक्त की जाती है। जिनकी डिंबवाही नलिका (fallopian tube) बंद हो लेकिन उनका गर्भाशय स्वस्थ अर्थात् गर्भधारण के सर्वथा योग्य हो।

25 जुलाई, 1978 को लंदन के ओल्डहैम जनरल हॉस्पिटल में 32 वर्षीय महिला लेसली ब्राउन ने **लुइसी जॉय ब्राउन** नामक एक कन्या को जन्म दिया जिसे विश्व के प्रथम परखनली शिशु होने का श्रम है।

इन विट्रो फर्टिलाइजेशन एक ऐसी तकनीक है जिससे निसंतान दंपत्तियों के लिए अब बच्चों को पाना सुगम हो सकेगा। इस तकनीक के जरिये मानव के शुक्राणु को उसके सामान्य आकार के करीब तिहत्तर सौ गुणा तक बड़ा किया जा सकता है ताकि उन महिलाओं को जिन्हें प्रजनन के दौरान समस्यायें आती है वे आसानी से मां बन सके। प्रजनन विशेषज्ञों ने इस तकनीक के जरिये शुक्राणु को पंद्रह सेंटीमीटर तक लंबा करने में सफलता पायी जो कि सामान्य तौर पर दिखने वाला शुक्राणु के आकार से कई गुणा बड़ा था।

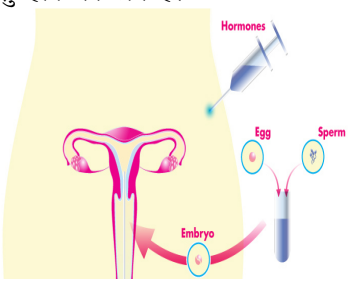

इस तकनीक के द्वारा उन पुरुषों को सहायता मिलेगी जिनकी पत्नियां बार-बार गर्भपात और गर्भधारण नहीं कर पाने की समस्या का सामना करती है। वास्तविक रूप से बड़ा यह इसलिए होता हैं कि पुरुष के शुक्राणु में मौजूद डीएनए (आनुवांशिक गुणों के स्थानांतरण के लिए जिम्मेदार) की आकृति में परिवर्तन आ जाता है या उनकी कई शिरायें मौजूद होती है जिस वजह से ये विकृत शुक्राणु मादा से शरीर से निकलने वाले अंडाणु का ठीक तरह से निषेचन नहीं कर पाते है और परिणामस्वरूप महिलाओं में गर्भधारण की समस्या आने लगती है। अभी तक के हुए प्रयोगों में शुक्राणुओं को चार सौ गुना तक बड़ा किया गया था और इससे उसके आनुवांशिक गुणों में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं आया था लेकिन इस बार इसे 7300 गुना तक बड़ा करने मे सफलता पाई गई और यह पाया गया कि यह निषेचन के लिए भी सक्षम था।

इण्टरफेरॉन

यह विषाणु संक्रमण के विरूद्ध कोषाणुओं द्वारा निर्मित एक सशक्त प्रतिविषाणु प्रोटीन है। यह विषाणुओं द्वारा स्वस्थ कोशिकाओं को संक्रमित करने की क्षमता का प्रतिरोध करता है। यह विषाणुओं के कोशकीय झिल्ली को दुष्प्रभावित कर देता है। जिससे यह दूसरी कोशिकाओं तक नहीं फैल सके। विषाणुओं के प्रोटीन संश्लेषण के अवरूद्ध करके यह विषाणुओं के गुणन (Multiplication) को नियंत्रित करता है। जीन अभियांत्रिकी की मदद से आजकल इन्टरफेरॉन का उत्पादन शरीर से बाहर भी किया जा रहा है।

स्तम्भ कोशिकाएं (Stem Cell)

स्तम्भ कोशिकाएं अन्य सामान्य कोशिकाएं की तरह ही होती है। लेकिन सामान्य कोशिका और स्तम्भ कोशिका में अंतर सिर्फ यह है कि स्तम्भ कोशिकाएं किसी भी अंग अथवा कोशिका के विकास करने की क्षमता रखती है। जैसे इनके माध्यम से हड्डी, मांसपेशी, यकृत, रक्त कोशिका और विभिन्न ऊतकों का निर्माण किया जा सकता है। सामान्यतः स्तम्भ कोशिकाओं को 5-7 दिन के निषेचित भ्रुण से प्राप्त किया जाता है। भ्रुण से निकलने के बाद इन्हें प्रोटीन व एन्जाइम के घोल में संवर्द्धित किया जाता है जहां ये कई गुना बढ़ जाती है। इसके बाद इन कोशिकाओं को नियंत्रित माध्यम में उगाया जाता है ये किसी नए अवयव या कोशिका में विकसित होने लगते है।

अब वैज्ञानिक भ्रुण से प्राप्त स्तम्भ कोशिकाओं की अपेक्षा शरीर के अन्य भागों से स्तम्भ कोशिकाओं को प्राप्त करने की कोशिश कर रहे है। अस्थिमज्जा तथा पेरीटोनियम कोशिकाओं को स्तम्भ कोशिकाओं का महत्वपूर्ण स्रोत माना जा रहा है। चिकित्सा जगत में क्रान्ति के लिए मानव की अस्थिमज्जा से ऐसी स्तम्भ कोशिकाएं खोज ली गई है, जो कोई भी ऊतक बना सकती है। अभी तक यह विशेषता मानव भ्रूण से प्राप्त स्तम्भ कोशिकाओं में ही पायी गयी थी। अभी हाल में 'एम.पी.ए.पी.सी.' (Multi Potent Adult Progynieter Cell) की खोज की गई है जो भ्रूण कोशिकाओं में ही पाई गयी है। जो भ्रूण कोशिकाओं से प्राप्त बीज कोशिकाओं की तरह कोई भी ऊतक बना सकते हैं। ये कोशिकाएं एक तरह से अमर हैं और परखनली में दो साल से बढ़ रही कोशिकाओं में उनकी विशेषता और लक्षण में कोई अंतर नहीं आया। एक ही कोशिका से पनपाई गई कोशिकाओं ने मांसपेशी, हड्डी, कार्टिलेज, जिगर व अनेक प्रकार के न्यूरॉन और मस्तिष्क कोशिकाएं बना डाली। ये कोशिकाएं वयस्कों में इंजेक्ट करने पर कैंसर जैसी रसौलियां भी नहीं बनाती जबकि भ्रूण कोशिकाओं ये यह खतरा रहता है। लेकिन अस्थि-मज्जा से स्तम्भ कोशिकाओं को प्राप्त करने के लिए किसी दाता की खोज तथा सहमति की आवश्यकता होती है। इसलिए अब वैज्ञानिको ने नाभिरज्जु या अम्बलिकल कॉर्ड से स्तम्भ कोशिकाओं को प्राप्त करने की विधि खोज ली हैं। जन्मोपरांत नाभिरज्जु को काटकर व्यर्थ पदार्थ मानकर फेंक दिया जाता है। लेकिन इसके चिकित्सकीय उपयोग की अपार सम्भावनाएं हैं। विश्व के कई देशों में भ्रूणों से स्तम्भ कोशिकाओं को प्राप्त करना विवादास्पद माना जाता हैं क्योंकि 14 दिन के बाद मानव भ्रूण शिशु का रूप लेने लगता है। इस प्रकार भ्रूणों से कोशिकाओं को प्राप्त करना भ्रूण हत्या माना जाता है।

स्टेम सेल के लाभः-

1. प्रयोगशाला में ही वंछित अंग तैयार कना सम्भव हो सकेगा।
2. बीमार दिल की जगह नया दिल विकसित होगा, खराब गुर्दे की जगह नया गुर्दा बनेगा, मधुमेह रोगियों को सही मात्रा मं इन्सुलिन देने वाले अग्नाशय की कोशिकाएँ विकसित की जा सकेंगी। इतना ही नहीं, प्रयोगशाला में नई हड्डियाँ बनाने का काम भी सम्भव हो सकेगा।

3. शरीर के जिन ऊतकों का क्षय हो जाता है, उसका इलाज सुविधाजनक हो जाएगा। जैसे-मधुमेह, हृदय रोग, अल्जाइमर, पार्किंसन जैसी बीमारियों का इलाज भ्रूण से उत्तक बनाने की विधि द्वारा बहुत आसान हो जाएगा।
4. वंशाणु कोशिका के माध्यम से मनुष्य के विकास की प्रक्रिया के प्रत्येक चरण को प्रयोगशाला में समझा जा सकेगा।
5. दवाओं व टीकों का परीक्षण स्टेम कोशिका से बने भ्रूण पर किया जाना सम्भव हो सकेगा।
6. संक्रमण या रासायनिक पदार्थों से जलने के मामलों में, आँख के कॉर्निया में चोट लगने से व्यक्ति अपनी आँखों की रोशनी खो देता है, ऐसे मामलों में अभी तक स्वस्थ आँख उत्तक का हिस्सा लेकर पीड़ित आँख में प्रत्यारोपण का ही विकल्प मौजूद था, लेकिन प्राय: यह कामयाब नहीं हो पाता है। किन्तु स्टेम सेल से विकसित उत्तक के साथ ऐसी समस्या नहीं होती।
7. अंतत: इस अनुसन्धान से थैलीसीमिया और सिकिल सेल एनीमिया के मरीजों को लाभ होगा।

स्टेम सेल में नए अनुसंधान

- साधारण कोशिका को ग्रोथ फैक्टर / रिट्रोवाइटल फैक्टर द्वारा स्टेम सेल में बदलने की कोशिश की जा रही है।
- सोमेटिक स्टेम सेल को इन्ड्यूस्ड (प्रेरित) प्लूरीपोटेन्ट स्टेम (IPSC) सेल में बदलने की कोशिश की जा रही है। जिसके द्वारा हम भ्रूण स्टेम सेल जैसा व्यवहार प्राप्त कर सके।
- 2009-10 में कुछ जीवों प इस प्रयोग को सफलता पूर्वक परीक्षण कर लिया गया है। जिसका लाभ यह होगा कि भ्रूण स्टेम सेल को लेकर जो सामाजिक व मौलिक समस्याएं उठ रही थी। उनका समाधान हो सकेगा।

ट्रांसजेनिक ऑर्गेनिज्म

पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीकी का उपयोग करके ट्रांसजेनिक आर्गेनिज्म तैयार किए जाते है। इस तकनीक से कुछ ट्रांसजेनिक जानवरों का भी विकास किया गया है। वर्तमान में इन जीवों का अनुसन्धान एवं विकास के क्षेत्र में उपयोग हो रहा है। ट्रांसजेनिक जानवरों से मानव के लिए लाभदायक पदार्थ जैसे-इन्सुलिन एवं मानव वृद्धि हार्मोस आदि प्राप्त करने की असीम सम्भावनाएँ है। कोशिश की जा रही है कि इन पदार्थों का बनाने के लिए, जिम्मेवार जीन का दुधारू पशुओं की कोशिकाओं में रिकबिनेंट डी.एन.ए. तकनीक के माध्यम से हस्तान्तरित कर दिय जाए, जिससे ये पशु अपने दूध में ऐसे पदार्थ उत्पन्न कर सकें।

ट्रांसजेनिक तकनीक के कुछ सम्भावित खतरे:-

(i) कोई खराब जीन जेनेटिकली मॉडीफाइड ऑर्गेजिन्म से अन्य पौधों में हस्तान्तरित होकर उनके लिए हानिकारक हो सकता है।
(ii) जेनेटिकली मॉडीफाइड ऑर्गेनिज्म की प्रतिरोधक क्षमता यदि जीवाणुओं में हस्तान्तरित हो गई तो उनमें एण्टीबायोटिक्स (Antibiotics) का असर कम हो जाएगा जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है।
(iii) जेनेटिकली मॉडीफाइड ऑर्गेनिज्म के उपयोग से पारिस्थितिक सन्तुलन बिगड़ कसता है, जिसका प्रभाव दीर्घकाल के बाद दृष्टिगोचार होगा।

उपरोक्त कारणों से विश्व के कई देशों ने जेनेटिकली मॉडीफाइड ऑर्गेनिज्म के सामान्य उपयोग पर कड़े प्रतिबन्ध लगाए है।

ट्रांसजेनिक कृषि

- ट्रांसजेनिक कृषि के अन्तर्गत ट्रांसजेनिक पौधों की प्रजातियों के विकास में प्राकृतिक जीन में कृत्रिम उपायों के द्वारा किसी दूसरे पौधे के जीन का भाग जोड़ दिया जाता है अथवा इनकी मूल संरचना को परिवर्तित कर दिया जाता हैं। पौधों में यह परिवर्तन निम्न लाभ के लिए किया जाता है-
  (i) गुणवत्ता एवं उत्पादक्ता में वृद्धि,
  (ii) प्रोटीन, खनिजों आदि की मात्रा में वृद्धि करके उन्हें अधिक पौष्टिक बनाना,
  (iii) जल आवश्यकता को कम करना और
  (iv) बीमारियों एवं कीटों के प्रति प्राकृतिक प्रतिरोध क्षमता में वृद्धि करना आदि।
- भारतीय वैज्ञानिकों ने **ट्रांसजेनिक अरहर** और **चने** का विकास कर लिया है।
- इस तकनीक से फलों, सब्जियों आदि के जीवन में वृद्धि का प्रयास किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त अनेक किस्मों के जेनेटिकली मॉडीफाइड ऑगेनिज्म (GMO - Genetically Modified Organism) जा रहा है।
- ऐसे ऑर्गेनिज्म जिनका विकास जीनों के हस्तातंरण द्वारा किया गया हो, ट्रोसजेनिक ऑर्गेनिज्म (पादप या जन्तु) कहलाता है तथा ट्रांसजेनिक फसलों की खेती ट्रांसजेनिक कृषि कहलाता है।

जी.एम. फसल (जेनेटिकली मॉडीफायड क्रॉप)

यह ऐसी फसल होती है, जिनमें बाहरी जीन पाया जाता है। इसके प्रयोग से मनचाहा उत्पादन, रोग और सूखा प्रतिरोधकता रखने वाली फसलों का उत्पादन किया जाता है। इस प्रकार के GM फसलों में बैगन, टमाटर आदि का प्रयोग भी प्रारम्भ हो गया है।

लाभ:-

1. जेनेटिकली मोडीफायड फसल कम साधनों में अधिक गुणवत्ता और उत्पादकता प्रदान कर सकती है तथा इस पर हानिकारक कीटनाशकों को छिड़कने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी।
2. इसका प्रयोग प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे अर्द्ध सूखे क्षेत्र (Semi Dired areas) में भी किया जा सकता है।
3. जी.एम. तकनीकी में कम पानी का प्रयोग करने वाले फसलों को उगाया जा सकता है, तथा उनमें प्रोटीन और खनिजों आदि की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।
4. जी.एम. खाद्य पदार्थ आम लोगों को टीके और विटामिन भी प्रदान कर सकता है।

हानियाँ:-

1. कोई जीन जेनेटिकली मॉडीफायड आर्गेनिज्म से अन्य पौद्यो में हस्तान्तरित होकर उनके लिए हानिकारक हो सकता है।
2. जी.एम. ऑगैनिज्म की प्रतिरोध क्षमता यदि जीवाणुओं में हस्तान्तरित हो गई तो उनमें एण्टि-बायोटिक का असर कम हो जाएगा जो मानव स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हो सकता है।

जीन गन प्रौद्योगिकी (Gene Gun Technology)

जीन गन एक ऐसी पद्धति है जिसमें प्रत्यक्ष जीन अंतरण कराया जाता है। पौधों में जीन अंतरण के लिए किसी जीन विशेष के डीएनए से सोना या टंगस्टन माइक्रोस्कोप को आलेपित किया जाता है। फिर इस माइक्रोस्कोप को लक्षित कोशिकाओं की ओर तीव्र गति से उन्मुख किया जाता है। एक बार लक्षित कोशिका में प्रवेश कर जाने के पश्चात माइक्रोस्कोप के बाहर आलेपित डीएन को मुक्त कर दिया जाता है और इसे पौधों के जीनोम में संस्थापित कर दिया जाता हैं। इस पद्धति को **'माइक्रोप्रोजेक्टाइल बंबार्डमेंट'** या **'बायोलिस्टिक्सि'** भी कहा जाता हैं। वैसे जीन गन मानव एवं पशु के लिए भी उपयोगी है। डीएनए टीका देने के लिए भी इसका उपयोग होता है। इसकी सहायता में बाह्य जीन को मस्तिष्क ऊत्तक में प्रत्यारोपित किया जा सकता है। यह तकनीक पार्किंसन रोगियों के लिए एक अत्यंत सुखद पहलू है। इस प्रकार से प्रत्यारोपित जीन, कोशिका में डोपामाइन (डोपा का डीकार्बोक्सिलेटेड रूप) का निर्माण करता है। जो मस्तिष्क कोशिकाओं में अंतरकोशिकीय संचरण में सहायक होता हैं। पार्किंसन रोग (Perkinsons's Disease) मस्तिष्क से संबंधित एक ऐसा रोग है, जिसमें मस्तिष्क उत्तकों में अन्तरकोशिकीय संचार के अभाव में मनुष्य का मानसिक विकास नहीं हो पाता है।

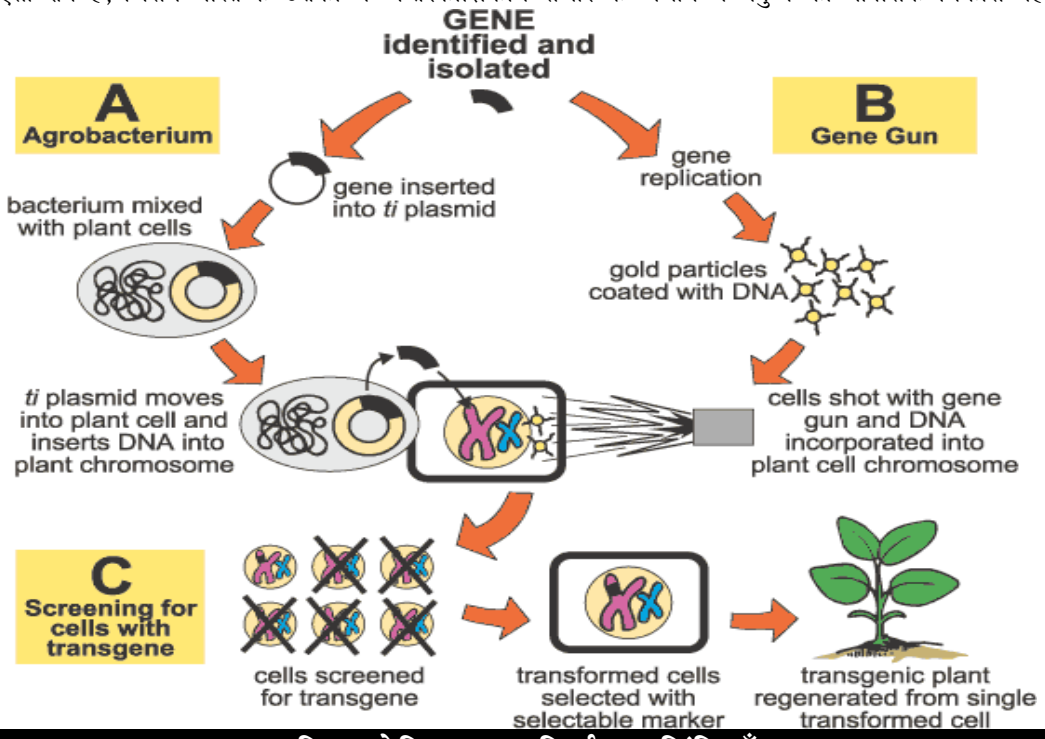

कृत्रिम कोशिका का निर्माण (सिंथियाँ)

क्रेग वेंटर के नेतृत्व में माइक्रोप्लाज्मा माइकाइटिस नाम सूक्ष्म बैक्टीरिया की मदद से कृत्रिम कोशिका के निर्माण ने वैज्ञानिक जगत को एक नई दिशा दी है। पहली बार कृत्रिम जीव का निर्माण प्रयोगशाला स्तर पर सम्भव हुआ। अर्थात् से ऐसी कोशिका है जिसके पूर्वज नहीं है।

प्रक्रिया-

1. माइकाइटिस बैक्टीरिया की कोशिका का DNA लेकर सर्वप्रथम उसके जीनों को पढ़ा गया। (जीनोम)
2. यीस्ट के जैव रसायन से उन जीनों की नकल तैयार की गई और उन्हें संयोजित कर कृत्रिम DNA तैयार हुआ।
3. पुनः इस बैक्टीरिया की जीवित कोशिका को लेकर उसके प्राकृतिक DNA के स्थान पर इस कृत्रिम DNA को प्रतिव्यक्ति किया गया। अब कोशिका स्वाभाविक रूप से व्यवहार करने लगी DNA में जीवन का अनुकरण प्रारंभ हो गया। कोशिका में बहुगुणन भी प्रारंभ हो गया।

लाभ-

1. इसका मुख्य लाभ चिकित्सा विज्ञान के साथ-साथ कृषि व पर्यावरण के क्षेत्र में होगा। ऐसे बैक्टीरिया तैयार किए जा सकेगे जिनके द्वारा पर्यावरण में CO_2 के असर को कम किया जा सकता है तथा ऐसे बहुत से पौधे जो N_2 संश्लेषण नहीं कर पाते उनके लिए भी Synthetic कोशिका सहायक होगी और खाद का नया विकल्प तैयार किया जा सकेगा।
2. ऐसे प्रोटीनों का निर्माण संभव होगा जिनका सीधा प्रयोग वैक्सिन में किया जा सकेगा।
3. समुद्र में तेल रिसाव को अवशोषित करने के लिए Super Buy जैसे बैक्टीरिया का निर्माण किया जा सकेगा।
4. चिकित्सा में

विशेष-

वास्तव में वेंटर ने नवीन जीवन नहीं रचा बल्कि प्राकृतिक कोशिका में ही कृत्रिम DNA को आरोपित किया। इसे 1970 के हरगोविन्द खुराना के प्रयोग का ही विकसित रूप माना जा सकता है। जब इनके द्वारा एक जीवन का संश्लेषण प्रस्तुत किया गया था। वेंटर ने लगभग 500 जीन या जेनेटिक कोड के 1 लाख युग्म को संश्लेषण करने में सफलता हासिल की है।

जैव सूचना विज्ञान (बायो इन्फॉर्मेटिक्स)

बायो-इंफॉर्मेटिक्स जैविक सूचनाओं के प्रबंधन में कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग है। यह एक ऐसा विज्ञान है, जिसमें कम्प्यूटरों के उपयोग से सजीव कोशिकाओं को प्रभावशाली डाटोबेस में बदलकर जीन की संरचनात्मक और क्रियात्मक सूचनाओं को प्राप्त किया जाता है। यह आणविक जीवविज्ञान द्वारा उत्पन्न आंकड़ों की प्राप्ति, संग्रहण, प्रबंधन, अभिगमन और संसाधन से जुड़ा है। बायो-इंफॉर्मेटिक्स में डीएनए सिक्वेंसिंग से उत्पन्न आंकड़ों के संग्रहण और विश्लेषण में सहयोग के लिए इंटरनेट उपकरण, कृत्रिम बुद्धिमता और अन्य आधुनिक संगणन के तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है। बायो-इंफॉर्मेटिक्स दुनिया भर के वैज्ञानिकों के बीच संवाद को भी सुविधाजनक बनाता है। इससे निम्नलिखित क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन की आशाएँ है-

1. किसी जानलेवा बीमारी के लिए जिम्मेदार "जीन-समूह" का पता लगाना।
2. औषध-निर्माण के लिए एक लक्ष्य को निश्चित करना।
3. उस लक्ष्य को पाने के लिए उपयुक्त अणुओं (लिगेंड्स) की डिजाइन तैयार करना।
4. एक उपर्युक्त औषध का उसके वैध प्राप्तकर्ता (रिसेप्ट) तक आसानी तथा शीघ्रता से पहुँचाना।
5. किसी पौधे के किसी जीन में इस तरह परिवर्तन करना कि पुनर्योजित प्रोटीन (Recombinant Protein) का उपयोग मानव के कल्याण में हो सके।

क्रायो बायोलॉजी

अति निम्न ताप पर जीव-विज्ञान का अध्ययन की **क्रायो बायोलॉजी** कहलाता है। विशेषत: इसमें जीवों पर निम्न तापमान के प्रभावों का प्रयोग किया जाता हैं किसी रोग के उपचार तथा जेव पदार्थों के संरक्षण में इसकी विशेष उपयोगिता है किन्तु वर्तमान में निर्जीव पदार्थों का संरक्षण भी इससे किया जा रहा है।

विभिन्न पौधों या जीवों की कोशिकाओं, ऊतकों अथवा जीवों के सभी प्रकार के जन्म द्रव्यों को 196^0C के अति निम्न ताप पर द्रव नाइट्रोजन में सुरक्षित रखा जाता है जिसे जर्मप्लाज्म संरक्षण कहा जाता है। इसकी विकसित तकनीक में सामान्य निम्न तापीय संरक्षण के रूप में Dimethyl Sulpher Unide का प्रयोग किया जाता है। पहले इस तकनीक का प्रयोग केवल संरक्षण हेतु किया जाता था। किन्तु वर्तमान में निम्न तापीय शल्य चिकित्सा भी तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

निम्न तापीय शल्य चिकित्सा की अवधारणा सर्वप्रथम 1994 में सामने आई। इस तकनीक में रोगग्रस्त कोशिकाओं या उत्तकों को बिना किसी अन्य कोशिका को नुकसान पहुँचाऐं नष्ट कर दिया जाता है। इसमें प्रयुक्त होने वाली तकनीक को Dip Stick Method कहते है और इसमें द्रव N_2 का ही प्रयोग होता है। वर्तमान में इसकी एक शाखा के रूप में "Sush" चिकित्सा ठोस CO_2 का प्रयोग करते है।

हिमशीतित वीर्य प्रौद्योगिकी:- अधिक दूध देने वाली उन्नत नस्ल की गायें, भैंसें, बकरियाँ, भेड़ें एवं अन्य पालतू पशुओं की संख्या में वृद्धि के लिए कृत्रिम गर्भाधान की तकनीक विकसित की गई। पहले चरण में इसके लिए पशु चिकित्सालयों में उन्नत किस्म कें साँड रखे गए जिनसे वीर्य को तत्काल निकाल कर मादा पशुओं का कृत्रिम तरीके से गर्भाधान किया जाता है। यह विधि अपेक्षाकृत अधिक महँगी तथा समस्या प्रधान है। इसके विकल्प के रूप में हिमशीत वीर्य प्रौद्योगिकी विकसित की गई है। जिसके अन्तर्गत चुनिन्दा पशु फार्मों पर उन्नत किस्म के साँडों से वीर्य निकाल कर उसे काफी कम तापमान पर हिमशीतित कर दिया जाता है। इससे शुक्राणु जीवित बने रहते है। इस प्रकार से हिमशीतित वीर्य आसानी से प्रजनन केन्द्रों पर पहुँचाकर उससे कृत्रिम गर्भाधान कराया जाता है।

टर्मिनेटर जीन

- अमेरिकी वैज्ञानिकों ने एक ऐसे जीन का विकास किया है, जिसे किसी फसल के बीज में डाल देने पर उसकी प्रजनन क्षमता समाप्त हो जाती है। इस जीन की खोज और सम्बद्ध तकनीक का विकास अमेरिका कम्पनी डेल्टा एण्ड पाइनलैण्ड और अमेरिका के कृषि विभाग ने सम्मिलित रूप से किया है। इस जीन को टर्मिनेटर जीन कहा जाता है। टर्मिनेटर जीन एक उपज शक्ति विनाशक जीन है, जिसका उपयोग करने पर बीज पहली बार बोए जाने पर तो सामान्य रूप से कार्य करता है, परन्तु मूल बीज से उगाई जाने वाली फसल के बीज से जब दूसरी बार फसल प्राप्त करने की कोशिश की जाती है, तब उससे पौधे तो उत्पन्न होते है, किन्तु पौधों में फूल या फल नहीं लगते। इस तकनीक का विकास किसानों द्वारा किसी बीज को दूसरी बार प्रयोग करने से रोकने के लिए किया गया है जिससे वे बहुराष्ट्रीय बीज कम्पनियों को रॉयल्टी दें।
- भारत सरकार ने टर्मिनेटर जीन युक्त बीज के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। इसने आयात हेतु परमिट जारी करने वाली ऑथोरिटी को निर्देश दिया है कि वे यह सुनिश्चित करें कि भारत में आयातित बीजों में टर्मिनेटर जीन नहीं हों।
- परन्तु टर्मिनेटर जीन तकनीकी का एक फायदा भी है। इसके द्वारा अनिच्छित पौधों जैसे- पार्थेनियम की वृद्धि को रोका जा सकता है जो आम लोगों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी है।

प्रोबायोटिक फूड

प्रोबायोटिक फूड वह खाद्य पदार्थ है जिसमें जिंदा बैक्टीरिया माइक्रोऑर्गेनिज्म शामिल होते है। प्रोबायोटिक विधि रूसी वैज्ञानिक एली मैस्निकोफ ने प्रस्तुत की थी। उन्हें बाद में नोबेल पुरस्कार भी मिला था। इस विधि के अनुसार शरीर में दो तरह के बैक्ट्रीरिया होते है, एक मित्र और एक शत्रु। भोजन के जरिए यदि मित्र बैक्टीरिया ले तो वे धीरे-धीरे शरीर में मौजूद शत्रु बैक्टीरिया को नष्ट करने में कारगर साबित होते है। मित्र बैक्टीरिया प्राकृतिक स्रोतों और भोजन से प्राप्त होते है। मसलन दूध, दही और कुछ पौधों से मिलते है। अभी तक तीन-चार ऐसे बैक्टीरिया ज्ञात है जिनका इस्तेमाल होता है। इनमें लेक्टिक एसिड, लिनिड, यीस्ट, बेसिल्ली। इन्हें एकत्र करके प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थों में डाला जाता है। दावा है कि इस तरह से शरीर में पहुँचने वाले बैक्टीरिया किसी प्रकार का नुकसान भी नहीं पहुँचाते हैं। शोधों में बीमारियों की रोकथाम में इनकी भूमिका सकारात्मक पाई गई है तथा कोई साइड इफेक्ट ज्ञात नहीं है।

सेरोगेसी

स्त्री और पुरुष के अंडाणु और शुक्राणु लेकर उन्हें परखनली में विकसित किया जाता है और फिर एक तय अवधि के बाद किराये की कोख में रख दिया जाता है। इसके लिए माँ-बाप और सेरोगेट मदर के बीच एक कानूनी करारनामा होता है। जिसमें कोख का किराया और अन्य मेडिकल सुविधाओं तथा प्रसव का खर्च शामिल होता है।

सरोगेसी' का शाब्दिक अर्थ होता है- किसी और को अपने काम के लिए नियुक्त करना। यह एक प्रक्रिया है जिसमें वास्तविक माता की जगह एक दूसरी महिला बच्चे को जन्म देने के लिए अपनी कोख देती है। 'सरोगेसी' एक लैटिन शब्द **सबरोगेट** से प्रचलन में आया है।

सरोगेसी को ऐसी महिलाएँ अपनाती हैं जो बच्चे को जन्म देने में असमर्थ होती हैं शुक्राणु और अंडाणु को निषेचित कराकर भ्रूण को उस महिला की कोख में डाल दिया जाता है। इसमें 1% अंश भी 'सरोगेट मदर' का नहीं होता है। इससे बच्चे के साथ उनका अनुवांशिक संबंध बरकरार रहता है। इस प्रक्रिया द्वारा जन्म लेने वाले बच्चे का रंग, लंबाई, प्रकृति, आनुवांशिक गुण आदि सभी आनुवंशिक माता-पिता के ही होते हैं।

सरोगेसी के प्रकार

सरोगेसी दो प्रकार की होती है- ट्रेडिशनल तथा गेस्टेशनल सरोगेसी।

ट्रडिशनल सरोगेसी- प्रक्रिया में दम्पत्ति में से पिता के शुक्राणु को एक स्वस्थ महिला के अण्डाणु के साथ प्राकृतिक रूप से निषेचित किया जाता है। शुक्राणुओं को सरोगेट मदर के प्राकृतिक निषेचन (Natural Ovulation) के समय डाला जाता है। इसमें आनुवांशिक संबंध सिर्फ पिता से होता है।

गेस्टेशनल सरोगेसी- इस पद्धति में माता-पिता के अण्डाणु व शुक्राणुओं का मेल परखनली विधि से कराकर भ्रूण को सरोगेट मदर की बच्चेदानी में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है।

इसमें बच्चे का आनुवांशिक संबंध माता और पिता दोनों से होता है। इस प्रक्रिया में सरोगेट मदर को 'ओरल पिल्स' खिलाकर अण्डाणुविहीन चक्र में रखना पड़ता है जिससे बच्चा होने तक अण्डाणु न बन सके। साथ ही जो महिलाएँ सेरोगेट मदर बनने के लिए तैयार हो जाती है उनकी मेडिकल जाँच इत्यादि कर यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि उसे किसी प्रकार का रोग इत्यादि तो नहीं है।

बायोमीट्रिक्स

वर्तमान सूचना क्रांति के दौर में पासवर्ड के बिना न तो आप अपना कम्प्यूटर खोल सकते है और नहीं एसटीडी पर बात ही कर सकते है। पासवर्ड एक कमांड है जो कम्प्यूटर आदि को खोलने और उसक कार्यकारी बनाने के लिए आवश्यक होता हैं। लेकिन पासवर्ड को तोड़ा भी जा सकता हैं इस मूलभूत समस्या से बचने के लिए कम्प्यूटर वैज्ञानिकों ने एक अनोखा उपाय खोजा है, जिसके अंतर्गत मानव शरीर ही पासवर्ड बन जायेगा। कम्प्यूटर विज्ञान ने इस विधि को 'बायोमीट्रिक्स' नाम दिया हैं इसके तहत शरीर की बनावट और अंग संचालन को पहचान कर कम्प्यूटर काम करेगा। वस्तुत: कम्प्यूटर अपने स्वामी को पहचानने के लिए उसकी उंगलियों के निशान, वॉयस प्रिंट, आवाज, आंखें के विशेष रंगीन घेरे (आइरिश प्रिंट), चेहरा-मोहरा, रूप-रंग और हस्ताक्षर आदि को ध्यान में रखता है। कम्प्यूटर की भाषा में इसे 'आई एण्ड ए' (आईडेंटिफिकेशन एंड ऑथंटिकेशन) कहते है।

बायोमीट्रिक्स क्रेडिट कार्ड या कम्प्यूटर की-बोर्ड पर आधारित होता है। यह पासवर्ड के विकल्प का काम तो करता ही है, साथ ही साइबर स्पेश में व्यापार करने के लिए आपके **डिजिटल सिग्नेचर** का भी काम कर सकता है।

किसी व्यक्ति की पहचान उसकी शारीरिक एवं व्यवहारिक गुणों के आधार पर सत्यापित करने की तकनीक ही बायोमीट्रिक्स कहलाती है। इसका शाब्दिक अर्थ ही है कि किसी व्यक्ति का जैविक गुणों के आधार पर पहचान निर्धारित करना।

बायोमीट्रिक्स दो प्रकार से कार्य करता है:-

1. वह मानव की शारीरिक विशेषताओं से सम्बन्धित आँकड़ों व आवृत्तियों को जमा करता है।
2. वह मानव व्यवहार द्वारा विशिष्ट पहलुओं का विश्लेषण व मापन करता है।

यह कार्य तीन चरणों में पूरा होता है:-

प्रथम चरण में मनुष्य की शारीरिक विशेषताओं को जैव-प्रौद्योगिकी और इलेक्ट्रानिक यंत्रों (मुख्यत: कम्प्यूटर) के माध्यम से एकत्र करना।

द्वितीय चरण में एकत्र विशेषताओं को आँकड़ों में परिवर्तित कर Digital Code का रूप देना।

तृतीय चरण में बायोमीट्रिक्स तंत्र वांछित व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत जानकारी या उसके शारीरिक प्रतिबिम्ब को लेकर अपने Data Base में उपस्थित जानकारी से मिलान करता है और निष्कर्ष प्रस्तुत करता है। बायोमीट्रिक्स के उपयोग के लिए एक संवेदक की आवश्यकता होती है।

बायोनिक्स

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, 'बायोनिक्स' अंग्रेजी शब्द बायोलॉजी के 'बायो' तथा इलेक्ट्रानिक्स के 'निक्स' अंश के संयोग से बना है। बायोनिक्स शब्द से आश्य जीवित मानव शरीर के अंगों तथा कृत्रिम शारीरिक अंगों के मध्य तालमेल बैठाने हेतु उपयोग में लाई जाने वाली ऐसी यांत्रिक एवं इलेक्ट्रानिक तकनीकों से है, जिनके द्वारा कृत्रिम मानव अंगों के संचालन को मानव शरीर द्वारा अधिकाधिक नियंत्रणयुक्त, संवेदनशील एवं उपयोगी बनाया जा सके। आसान शब्दों में बायोनिक्स कृत्रिम अंगों को भी प्राकृतिक अंगों की भांति संचालित करने की क्षमता प्रदान करने की आधुनिकतम तकनीक है। इस पद्धति में मानव के क्षतिग्रस्त अंगों से कुछ संदेश उसके मस्तिष्क को भेजे जाते है, जिनसे मनुष्य उन अंगों से संबंधित अपने कार्य आत्मनिर्भर रूप से पूरा कर सके। इसके लिये अनिवार्य जीवन व्यवस्थाओं को विद्युत संचालित मोटरों एवं संवेदनशील उपकरणों से शक्ति प्रदान की जाती है।

आवश्यकता: किसी भी दुर्घटना के कारण हाथ-पैर अथवा अन्य अंगों की हानि अथवा सैनिकों के युद्ध में अंग क्षत-विक्षत हो जाने, पक्षाघात से पीड़ित होने पर शारीरिक रूप से लाचार होने, नेत्र हानि एवं श्रवण शक्ति की हानि जैसी अनेक शारीरिक विकलांगताओं के कारण मनुष्य पीड़ा सहने, असहाय एवं पराश्रित हो जाने हेतु विवश हो जाता है। ऐसे में आवश्यकता इस बात की होती है। कि कुछ कृत्रिम अंगों की व्यवस्था के साथ ऐसे मानव जीवन को कम से कम इतना आत्मनिर्भर बनाने का पुनर्प्रयास किया जानये कि वह दूसरों पर कम से कम आश्रित होकर अपना जीवनयापन कर सके।

प्रकृति की देन भी सीमित है। मनुष्य के पास छिपकली अथवा स्टार फिश जैसी क्षमताएं नहीं है जिससे मानव शरीर के कटे हुये अंग प्राकृतिक रूप से दोबारा विकसित हो सकें। ऐसी स्थिति में सदियों से मनुष्य कृत्रिम अंगों के निर्माण एवं उपयोग हेतु प्रयत्नशील रहा है। पौराणिक कथाओं में भी उल्लेख प्राप्त होते है कि युद्ध क्षेत्र में सैनिक अपने क्षतिग्रस्त अंगों के स्थान पर लोहे के कृत्रिम अंग लगाकर रण-भूमि में युद्ध करने चले जाया करते थे।

उपयोगिता: आधुनिक समय में संभवत: बायोनिक्स विधा का आरंभ हृदय रोगों के उपचार में 'पेसमेकर' एवं श्रवण यंत्रों के आविष्कार एवं उपयोग के साथ हो चुका था। किसी भी व्यक्ति के शरीर में किसी दुर्घटना अथवा बीमारी के कारण उत्पन्न अंगहानि जैसे पैर तथा हाथ का कट जाना अथवा नेत्रहानि, श्रवणशक्ति होनि इत्यादि को कृत्रिम अंगों के द्वारा पूरा करने का प्रयास चिकित्सा जगत में सदियों अंगों के द्वारा पूरा करने का प्रयास चिकित्सा जगत में सदियों से किया जाता रहा है और इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति भी हुई है। भारत में विकसित 'जयपुर फुट' ने आज संपूर्ण विश्व में ख्याति अर्जित की है। कृत्रिम अंगों के प्रत्यारोपण द्वारा मनुष्य को पुन: सामान्य जीवन प्रदान किया जा सकता है। बायोनिक्स मात्र कृत्रिम अंगों के प्रत्यारोपण तक ही सीमित न होकर पक्षाघात पीड़ित ऐसे असहाय मनुष्यों हेतु वरदान सिद्ध हो रहा है जो सुन तो सकते है, परंतु बोल नहीं सकते और न ही हिल सकते है।

तकनीक: यद्यपि वैज्ञानिकों द्वारा इस दिशा में 'स्टेम सेल' क्षेत्र में निरंतर अनुसंधान किये जा रहे है, जिनके द्वारा क्षतिग्रस्त अंगों के प्राकृतिक रूप से पुन: विकसित हो सकने की संभावनाएं होती है। यही प्राकृतिक रूप से पुन: विकसित हो सकने की संभावनाएं होती है। यही प्राकृतिक क्षमता स्टार फिश तथा छिपकली जैसे जंतुओं में पाई जाती हैं, परंतु अभी तक इस पद्धति का उपयोग के स्तर तक विकास नहीं हो सका है, अत: इसके बार में निश्चित रूप से कुछ भी न कहे जा सकने की वर्तमान स्थिति में कृत्रिम अंग प्रत्यारोपण ही आशा की एकमात्र किरण रह जाती है। कृत्रिम अंग प्रत्यारोपण की इस प्रक्रिया में बायोनिक्स एक आधुनिक तकनीक है, जिसके अंतर्गत मानव शरीर पर रोपित किये गये कृत्रिम अंग को इलेक्ट्रानिक्स मोटरों एवं अन्य संवेदनशील उपकरणों से संचालन शक्ति प्राप्त होती है। कंप्यूटर तकनीक एवं माइक्रो चिप्स के उपयोग द्वारा अत्यधिक सूक्ष्म संवदेनशील उपकरणों के विकास एवं इसकी संवदेनशीलता का उपयोग कृत्रिम मानव अंगों के संचालन हेतु भी किया जा रहा है। इसके साथ ही वर्तमान में अन्य अनेक विधाओं एवं तकनीकों जैसे- रोबोटिक्स, बायो-इंजीनियरिंग एवं मेग्स इत्यादि के उपयोग द्वारा कृत्रिम अंगों की रचना में छोटी-छोटी बातों पर यह ध्यान दिया जा रहा है ताकि कृत्रिम अंग मानव कोशिकाओं के साथ तालमेल बैठाकर कार्य कर सकें। किसी ने ठीक ही कहा है 'बायोनिक्स मानव एवं मशीन का विलय है।'

व्यावहारिक उपयोग: अमेरिका के इलेक्ट्रीशियन जेसी सुलीवेन को विश्व का प्रथम बायोनिक व्यक्ति होने का गौरव प्राप्त है। सन् 2001 में विद्युत करेंट की चपेट में आ जाने के कारण उनके दोनों हाथों को कंधों से काट देना पड़ा। लगभग दो माह बाद शिकागों के पुनर्वास केंद्र द्वारा उसे उस समय उपलब्ध कृत्रिम हाथ प्रदान किया गया। इसकी सहायता से सुलीवेन अपने पोते-पोतियों का आलिंगन करने, पानी का गिलास पकड़ कर पानी पीने, अपने लॉन की घास काटने तथा ऐसी अनेक गतिविधियों को दैनिक रूप से दोबारा से संपन्न करने लगे, जिनके विषय में हाथ कटने के बाद उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी।

टॉड क्वीकेन, निदेशक, शिकागो पुनर्वास केंद्र, सुलीवेन के मामले में उपयोग में लाई गई तकनीक को स्पष्ट करते हुए बताते हैं कि शरीर के क्षतिग्रस्त अंग के शेष तंतुओं को निकालकर उन्हें शरीर में उपस्थिति मांस-पेशियों में स्थानान्तरिक कर दिया जाता है। इससे दुर्घटनाग्रसत व्यक्ति के मस्तिष्क को यह ज्ञात हो जाता है कि वह अपने रोबोटिक्स हाथ के द्वारा कौन-सी क्रिया करना चाहता है। एक तंत्रिकीय शल्य चिकित्सा के द्वारा सुलीवेन के चार तंतुओं को उसके कंधों से काटकर निकाला गया तथा उन्हें उसकी छाती में प्रत्यारोपित कर दिया गया। इस प्रकार से प्रत्यारोपित तंतुओं के छोर अंतत: कटी हुई मांस-पेशियों की अपेक्षा उपस्थित मांस-पेशियों को अपने संदेश प्रेषित करने में सफल हुये। इस क्रिया का उद्देश्य भी यही था जिसके द्वारा सुलीवेन ने अपने कृत्रिम रोबोटिक हाथ को अपने प्राकृतिक हाथ की भांति संचालित करने में सफलता प्राप्त की। आज सुलीवेन अपने हाथों से मनोवांछित दबाव शक्ति का उपयोग करते हुये मछली पकड़ना, शीशे के गिलास को समुचति रूप से पकड़ने जिससे न तो वह टूटे न ही हाथ से छूटे जैसी क्रियायें एक सामान्य प्राकृतिक हाथ की भांति करने में सक्षमत हो चुका है।

इसी प्रकार का एक अन्य उदाहरण आमंदा किट्स का भी है जो मात्र एक बायोनिक महिला न होकर एक बायेनिक माँ भी है। किट्स, जो एक 9 वर्षीय बच्चे की मां है, तीन शिशु गृहों को संचालित करती है। एक सड़कों दुर्घटना में उनका एक हाथ कट गया। शिकागो पुनर्वास केंद्र के उपरोक्त वर्णित कृत्रिम हाथ ने उनके जीवन को पुर्ववत् सामान्य कर दिया तथा आज इस हाथ का उपयोग करते हुये वह शिशुओं के डायपर बदलने, रोटी बनाने हेतु आटा मलने तथा शिशु गृह के शिशुओं को अपनी बांहों में समेट कर सुरक्षा प्रदान करने में सक्षम है।

बायोनिक्स चमत्कार: वर्तमान में हम बायोनिक क्रांति के उद्भव काल में है, जिसका आशय है कि किसी भी प्रकार के पक्षघात अथवा स्पाइनल कार्ड इंजरी के कारण अब जीवन का अंत समझ लेने का समाप्त हो चुका है। बायोनिक्स की सहायता से अंधा देख सकता है, बहरा सुन सकता है तथा लंगड़ा चल सकता है और यह मात्र शुरूआत ही है। मात्र 10 माह के शिशु के कान के अंदर कॉकलियर प्रतयारोपण ने उसे अपनी मां की आवाज सुनने की क्षमता प्रदान करने में सफलता प्राप्त की है। हार्ट मेट-2 एक ऐसा बायोनिक हृदय पंप है जिसे ऍली स्मिथ नामक एक हृदयरोग पीड़ित लड़की के हृदय में प्रत्यारोपित किया गया, जिसके परिणामस्वरूप वह अपने पुरूष मित्र के साथ विवाह करके अपने भविष्य के जीवन के सपने देखने की आशा को पुनर्जीवित कर सकी एवं उसे 'बायोनिक दुल्हन' के नाम से जाना जाने लगा।

बायोनिक्स के विकास द्वारा आंखों से धुंधला दिखाई पड़ने वाले साफ देख सकते है। बायोनिक गुर्दे, जिन्हें एक बेल्ट की भंति पहना जा सकता है, जटिल गुर्दा शल्य चिकित्सा एवं प्रत्यारोपण तथा संबंधित जोखिमों के बेहतर विकल्प सिद्ध हो रहे है और इससे लाखों जीवनों की रक्षा किये जाने की आशा जागी है। यहां तक कि आज बायोनिक मस्तिष्क के विकसित किये जाने की दिशा में प्रयास हो रहे है। दक्षिण कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के बायोमेडिकल विभाग के प्रो. डॉ. थियोडॉर डब्ल्यू. बर्जर ने मस्तिष्क के 'हिप्पो कैम्पस' नामक घटक को प्रत्यास्थापित करने हेतु एक इलेक्ट्रॉनिक चिप विकसित की है। हिप्पोकैम्पस मस्तिष्क का वह घटक होता है, जो हमारी याददाश्त को सुरक्षित रखने का काम करता है।

ऐसे प्रयास किये जा रहे है कि जिस प्रकार से आज कुछ उपकरणों को मानव मांस-पेशियों के साथ जोड़ा जा रहा है, उसी प्रकार से भविष्य में कुछ को हड्डियों के साथ भी जोड़ा जा सकेगा। मस्तिष्क के कॉरटेक्स (वल्कन) में ऐसी कंप्यूटराइज्ड माइक्रो चिप्स प्रत्यारोपित की जा सकेगी जिससे मानव मस्तिष्क जो कुछ भी करना चाहे उसकी सूचनाएं बाहर प्रेषित की जा सकें। यहां तक कि पक्षाघात पीड़ित व्यक्ति अपनी इच्छाओं को कंप्यूटर को प्रेषित कर सकेगा। इस प्रकार बिना किसीमांस-पेशी को हिलाये ऐसा व्यक्ति एयरकंडीशनर, हीटर, लाइट, टीवी चैनल इत्यादि को नियंत्रित करने के साथ-साथ ई-मेल प्रेषित करने तक की क्षमता प्राप्त कर सकेगा।

भविष्य की संभावनाएं: जॉन हॉपकिन्स युनिवर्सिटी ऑफ एप्लाइड फिजिक्स लेबोरेटरी में वैज्ञानिक ऐसे बायोनिक अंगों के विकास एंव निर्माण में संलग्न है, जिससे ऐसे व्यक्तियों, जिनके हाथ काट चुके है, उन्हें ऐसे कृत्रिम बायोनिक हाथ प्रदान किये जो सकें ताकि उनका जीवन पूर्ववत् सामान्य हो सके। इसी संबंध में अमेरिका की डीएआरपीए अर्थात् डिफेंस एडवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी ने 34.5 मिलियन डॉक्लर मूल्य की एक परियोजना जॉन हॉपकिन्स युनिवर्सिटी ऑफ एप्लाइड फिजिक्स लेबोरेटरी को सौंपी है, जिससे इन कृत्रिम हाथ को और अच्छी तरह से विकसित किया जा सके। इस लेबोरेटरी द्वारा विकसित हाथ का वजन मानव हाथ के समान ही लगभग 9 पौंड है तथा देखने में यह पूर्णत: प्राकृतिक प्रतीक होता है और आश्चर्यजनक रूप से प्राकृतिक हाथों के समान ही क्रियाशील होता है। इस कृत्रिम अंग में छोटे आकार की मोटरें लगी है तथा इसे 22 डिग्री के कोण तक संचालित कर सकने हेतु मस्तिष्क नियंत्रित माइक्रो चिप लगी है, जिससे कृत्रिम हाथ की प्रत्येक अंगुली को भी आश्चर्यजनक रूप से अलग-अलग संचालित किया जा सकता है।

इसी प्रकार कृत्रिम दिल के क्षेत्र में एबीओमेड द्वारा विकसित 'एबीकोर' नामक कृत्रिम दिल अपने परीक्षण काल से गुजर रहा है तथा मरणासन्न हृदय रोगियों को अभी 6-7 माह तक अतिरिक्त जीवन प्रदान करने में सफल रहा है। बायोनिक नेत्र एवं कान के विकास में भी महत्वपूर्ण प्रगति हो रही है। नेपरविले के ऑप्टोबायोनिक्स ने कृत्रिम सिलिकॉन रेटीना का विकास किया है। इस कृत्रिम रेटीना में 2 मि. मि. व्यास एवं 25 माइक्रॉन मोटाई वाले माइक्रो चिप प्रयोग में लाये गये है। 'इलिनोयिस' नामक माइक्रो चिप आंख के अंदर प्रतयारोपित किया जाता है तथा यह 5000 ऐसे सूक्ष्मदर्शी उपकरणों आंखों में प्रवेश करने वाले प्रकाश को विधुत आभासों में परिवर्तित करते है, जिनके द्वारा रेटीना को कोशिकायें उत्तेजित होकर मनुष्य को सीमित दृष्टि प्रदान करती है।

श्रवण के क्षेत्र में भी निरंतर अनुसंधान जारी है। मनुष्य के कान में असंख्य रोग कोशिकाएं होती है, जो अनेक प्रकार की आवाजों को सुनने में सहायक होती है। इनके क्षतिग्रस्त होने से ध्वनि, श्रवण तंत्रिकाओं से मानव मस्तिष्क तक नहीं पहुंच पाती और मनुष्य बहरा हो जाता है। इसके उपचार हेतु कॉकलियर प्रत्यारोपण का विकास हुआ है जो श्रवण क्षेत्र के बायोनिक्स से संबंधित है। इस रोपण में असंख्य इलेक्ट्रोड होते है, जो क्षतिग्रस्त रोम कोशिकाओं के कार्य को दोहराते है, जिससे सुनने हेतु आवश्यक जानकारी मानव मस्तिष्क तक पहुंच जाती है।

बायोनिक प्रत्यारोपण लागत: वर्तमान में बायोनिक कृत्रिम अंग प्रत्यारोपण अत्याधिक महंगा है तथा अभी बीमा कंपनियां भी इसके लिये कोई योजना उपलब्ध नहीं करा रही है। ऐसी प्रत्येक बायोनिक शल्य चिकित्सा में 5000 से 50,000 डॉलर एवं विभिन्न अतिरिक्त करों के अलावा शिकागो के पुनर्वास केंद्र पर आने-जाने का व्यय आता है। इसे मितव्ययी बनाने हेतु अनुसंधान जारी है। आशा है शीघ्र ही इस प्रक्रिया को और कम लागत पर संपन्न किया जा सकेगा।

व्यावसायिक संभावनाएं: वैश्विक उद्योग विश्लेषण (जीआईए) के अनुमान के अनुसार सन् 2015 तक कृत्रिम अंग प्रत्यारोपण की बाजार लगभग 19.4 बिलियन डॉलर की हो जायेगी। जीआईए के अनुमान के ही अनुसार ऐसे प्रत्यारोपणों की आवश्यकता में वृद्धि न केवल दुर्घटनाओं में हुई अंग हानि के कारण होगी वरन् कई अन्य बीमारियों जैसे 'आस्टियोपोरेसिस', 'अर्थराइटिस' एवं बुढ़ापे के कारण अंगों की शिथिलता एवं सक्रिय जीवन शैली की चाहत भी लोगों को इस प्रक्रिया की ओर आकर्षित करेगी।

बीमा क्षेत्र हेतु वैश्विक स्तर पर ऐसी नई बीमा योजनाओं को विकसित करने की संभावनाएं है, जिनके द्वारा लोगों को दुर्घटना तथा अन्य प्राकृतिक कारणों से अंग हानि अथवा विकलांग होने की संभावनाओं के विरूद्ध बीमा कवर दिया जा सके। कृत्रिम अंगों के निर्माण में प्रयुक्त सामग्री एवं अन्य इलेक्ट्रानिक सामग्री के निर्माण एवं व्यापार की संभावनाएं भी इससे जुड़ी हुई है।

आशा हे कि इस दिशा में चल रहे कार्य न केवल मानव जीवन के स्वस्थ्य एवं दीर्घायु होने की आशा को पूरा करेंगे, वरन् शारीरिक विकलांगताओं एवं अक्षमताओं से पीड़ित मानवों की शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा को भी समाप्त करेंगे।

टेलोमरेज

दरअसल यह एक प्रोटीन है जो गुणसूत्रों के दोनों किनारों पर पाया जाता है। हम इसे जूतें के फीते का उदाहरण लेकर अच्छी तरह से समझ सकते है। यदि जूते के फीते को गुणसूत्र मान लिया जाए तो फिीते के किनारों पर लगी टोपी टेलोमरेज है। इसका निर्माण इम्ब्रायोनिक कोशिकाओं के द्वारा होता है। इसमें एक बहुत ही रोचक विशेषता पायी जाती है वह यह है कि कोशिकाओं के प्रत्येक विभाजन से प्रोटीन की यह टोपी छोटी होती जाती है। इस विभाजन प्रक्रिया में एक ऐसा दौर आता है जबकि ये इतनी छोटी हो जाया करती है कि विभाजन सम्पन्न कर पाने में असहाय हो जाती है। उनकी यही असक्षमता उनके मृतयु का कारण बन जाती है। अब यदि किसी तरीके से कोशिकाओं की असमर्थता को दूर कर दिया जाए तो इनमें विभाजन पुन: शुरू हो जायेगा। इस तरह की शुरूआत ऐतिहासिक शुरूआत लेगी क्योंकि इसके द्वारा चिकित्सा जगत की कई अनबुझी पहेलियों को खोलने की कुंजी मिल जायेगी। उदाहरण के लिए बुढ़ापा ऐसी समस्या है जिससे हर कोई लम्बे समय तक दूर रहना चाहता है किन्तु वह रह नहीं पाता है, कारण स्पष्ट है

कोशिकाओं की वृद्धि रूक जाती है, जिस वजह से कोशिकाएं मृत होने लगती है और शरीर के विभिन्न हिस्सों पर एकत्रित होने लगती है। यही एकत्रित कोशिकाएं झुर्रियों के रूप में प्रकट होती है। यदि इन्हें कुछ समय तक लम्बित करने की तकनीकी मिल जाए तो जीवन के इस क्रुर लक्षण से बहुत ज्यादा काल तक तो नहीं लेकिन एक छोटी समयावधि तक जरूर बचा जा सकता है। टेलोमरेज के विषय में वैज्ञानिक के मध्य ऐसी राय है कि इसके जरिए बुढ़पा से छुटकारा पाया जा सकता है। इस तकनीकी के जरिए यह भी जाना जा सकता है कि किसी व्यक्ति का जीवनकाल कितना लम्बा हो सकता है। होता यूँ है कि टेलामरेज जितना बढ़ा रहता है सतत विभाजन की प्रक्रिया को उतने ही अधिक समय तक सक्रिय रखता है वहीं दूसरी ओर छोआ होने पर विभाजन की प्रक्रिया को लम्बे समय तक बनाये नहीं रख पाता है। इसका यही गुण मानव सभ्यता के लिए वरदान माना जा रहा है।

बायोएथिक्स (Bioethics)

एथिक्स कुछ मानकों का समुच्चय होता है जो कोई जाति समूह अपने व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए बनता है। साथे ही इसके आधार पर यह भी निर्णय लिया जाता है कि कौन-सी चीज सही है और कौन-सी गलत। अत: बायोएथिक्स उन मानकों का समुच्चय कहा जा सकता है जो बोलॉजिकल संसार से जुड़े क्रिया-कलापों का नियंत्रण करता है। जैव प्रौद्योगिकी औरइसमें भी विशेषकर पुनर्योज्य डीएनए टेक्नोलॉजी का उद्देश्य जैव संसार को उस तरीके से दोहन करने का है जो 'प्राकृतिक' से 'हानिकारक' से 'जैव विविधता' तक फैला है। जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी मुख्य बायोएथिकल चिंताए निम्नलिखित है-

1. जैव प्रौद्योगिकी में जानवरों का प्रयोग हिंसात्मक है।
2. जब जानवरों का प्रयोग फार्मोस्यूटिकल प्रोटीन के निर्माण में किया जाता है, तो उनकी स्थिति एक 'कारखाने' जैसी हो जाती है।
3. एक जाति से दूसरी जाति में जीनों का स्थानांतरण करना उस जाति की सत्यनिष्ठा का उल्लघंन है।
4. मनुष्य के जीन को जानवरों में तथा जानवरों के जीन को मनुष्य में स्थानांतरित करना 'मानव होने' की परिकल्पना को छोटा कर देता है।
5. जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत जीवित प्राणियों के प्रति कोई सम्मान नहीं है और उनका मानव जाति के लिए मात्र शोषित किया जाता है।
6. जैव प्रौद्योगिकी से पय्यावरण को अदृश्य हानि हो सकती है जिसमें जैव विविधता को होन वाली हानि भी शामिल है।

जैव पीड़कनाशी (Bio Pesticides)

सूक्ष्म जीवधारियों का जब पीड़कनाशी के रूप में प्रयोग किया जाता है तो उन्हें 'जैव पीड़कनाशी' कहते है जैसे- वायरस, बैक्टीरिया, कवक, प्रोटोजोआ का इस्तेमाल पीड़कनाशी के रू‍प में करना। पीड़कनाशियों पर बहुत से सूक्ष्म जीव आक्रमण करते है, जैसे मृदा में पाया जाने वाला बैक्टीरिया बैसीलस थुरिंजिएंसिस एक प्रोटीन पैदा करता है जो पीड़कों के लिए जानलेवा होता है जैव पीड़कनाशी के उपयोग से रोगों पीड़कों तथा खतरपतवारों पर नियंत्रण के लिए रसायन पर निर्भरता कम हो जायेगी। ये रसायन प्रदूषण का बहुत बड़ा स्रोत साबित हो रहे है। इसके अलावा उनके कुछ अवशेष कृषि उत्पादों में भी बचे रह जाते हैं जो कि स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है।

बायोपेटेंट (Biopatent)

पेटेंट किसी सरकार द्वारा किसी खोजकर्ता को दिया गया अधिकार होता है जिससे कि वह अपनी खोज का दूसरों द्वारा वाणिज्यिक प्रयोग से रोक सके। किसी सरकार द्वारा पेटेंट निम्नलिखित के लिए दिया जाता है-

(a) कोई खोज (जिसमें काई उत्पाद भी हो सकता है)।
(b) पहले से ही की गयी खोज में कोई सुधार
(c) किसी उत्पाद को पैदा करने की प्रक्रिया तथा
(d) कोई परिकल्पना या डिजाइन।

शुरू-शुरू में पेटेंट केवल औद्योगिक खोजों के लिए ही दिए जाते थे। लेकिन आजकल जैविक तत्वों तथा उनसे व्युत्पन्न उत्पाद को भी दिए जाते है। इन पेटेंटों को 'बायो पेटेंट' कहते है। अभी केवल अमेरिका, जापान तथा यूरोप ही बायो पेटेंट प्रदान करते है।
बायो पेटेंट निम्नलिखित के लिए दिए जाते है-

1. सूक्ष्म जीवों के स्ट्रैंन्स (Strains),
2. कोशिका लाइन,
3. पौधों एवं जानवरों की आनुवांशिक रूप से रूपांतरित प्रजातियाँ,
4. विभिन्न प्रकार की जैव प्रौद्योगिकी विधियां,
5. उत्पादन प्रक्रियायें,
6. उत्पाद तथा
7. उत्पादों के अनुप्रयोग।

बायो पाइरेसी (Bio Piracy)

कई संगठनों तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियां दूसरे देशों के जैविक संसाधनों का दोहन अथवा पेटेंट बिना उस देश की सरकार के अनुमति के करा लेती है। इसी को 'बायो पाइरेसी' कहते है।

औद्योगिक देश टेक्नोलॉजी और वित्तीय संसाधनों में आगे है। लेकिन जैव विविधता तथा जैव संसाधनों के दोहन के लिए परम्परागत ज्ञान के मामले में वे विकासशील देशों से काफी पीछे है। फिर वे इस स्थिति का अनुचित लाभ उठाने के लिए 'बायोपाइरेसी' का सहारा लेते है।

जैव संसाधनों के अंतर्गत वे सभी जीव आते है जिनको कि वाणिज्यिक लाभ के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। जैव संसाधनों से संबंधित परम्परागत ज्ञान विभिन्न जाति समूहों द्वारा सदियों के प्रयास के बाद विकसित किया गया है, उदाहरणार्थ- जड़ी-बूटियों का दवा के रूप में प्रयोग। इस परम्परागत ज्ञान को आधुनिक वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए भ्झी प्रयोग में लाया जा सकता है। परम्परागत ज्ञान के सहारे हम समय, प्रयास तथा पैसा सब बचा सकते है। यही वजह है कि आजकल की संस्थायें तथा कंपनियां इस परम्परागत ज्ञान का दोहन करने के लिए कटिबद्ध है। इसके लिए वे निम्नलिखित तरीके अपना रही है-

1. वे जेनेटिक संसाधनों को स्वयं इकट्ठा करके पेटेंट करा रही है, जैसे- अमेरिका में बासमती चावल का पेटेंट कराना, जबकि वह भारत की सदियों से देशज उपज है।
2. जैव संसाधनों का जैव अणुओं के लिए विश्लेषण करना। जैव अणु किसी भी जीव द्वारा उत्पन्न एक प्रकार के यौगिक होते है। इन जैव अणुओं का वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए पेटेंट कराया जा रहा है।
3. जैव संसाधनों से लाभदायक जीनों को अलग करके उनका पेटेंट कराया जा रहा है। इसके बाद इन जीनों का उपयोग वाणिज्यिक उत्पाद पैदा करने में किया जाता है।
4. कुछ मामलों में तो परम्परागत ज्ञान का ही पेटेंट कराया जा रहा है।

पश्चिमी अफ्रीकी पौधा 'पेंटाडाइप्लान्ड्रा ब्रैझेना' ब्रैझेन नामक एक विशेष प्रोटीन पैदा करता है जो कि चीनी के मुकाबले 2000 गुना ज्यादा मीठा होता है, लेकिन इसकी कैलोरी चीनी से बहुत कम होती है। स्थानीय लोगों को इसका ज्ञान सदियों से रहा है। लेकिन ब्रेझेन प्रोटीन को अमेरिका में पेटेंट करा लिया गया है।

जैव प्रौद्योगिकी की पर्यावरण सुरक्षा एंव जैव विविधता संरक्षण में उपयोग

पर्यावरण सुरक्षा तथा जैव विविधता संरक्षण में जैव प्रौद्योगिकी के निम्नलिखित उपयोग है।

- प्रदूषक खानों के जैविक उपचार हेतु समेकित जैव प्रौद्योगिकी तरीका अपनाया जाता है।
- खनिजों से धातुओं के निष्कर्षण में अयस्कों को उपयुक्त घुलनशील रूप प्रदान करने हेतु जीवाणु काम में लाये जाते है, जिससे पय्यावरण संरक्षण में मदद मिलती है।
- खनिज तेल एंव पेट्रोलियम के स्रोतों से तेल की अधिक मात्रा प्राप्त करने में जीवाणु मददगार होते है।
- गैस युक्त ईंधनों से हाइड्रोजन सल्फाईड (HS_2) जैसी प्रदूषक गैस हटाने के लिए जीवाणुओं के उपयोग की तकनीक विकसित की गयी है।
- समुद्र अथवा अन्य जल स्रोतों में फैले पेट्रोलियम पदार्थों अथवा तैलीय पदार्थों को स्यूडोमोनास नामक जीवाणु द्वारा साफ कराया जाता है।
- प्लास्टिक, डिटर्जेंट आदि के प्रदूषण रहित उत्पादन में जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग होता है।
- जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर नष्ट वनों को पुनः हराभरा किया जाता है।
- जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग आर्थिक एवं औषधीय रूप से महत्वपूर्ण पौधों के नस्ल सुधार एवं संरक्षण के काम में किया जाता है।
- विलुप्तप्राय एंव दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण, परिवर्तन आदि में जैव प्रौद्योगिकी प्रयुक्त होती है।
- उत्तक संवर्धन द्वारा उत्पन्न किये गये पौधों को मरूस्थल के विस्तार को रोकने में इस्तेमाल किया जा रहा है।

इस प्रकार जैव प्रौद्योगिकी का पर्यावरण सुरक्षा एवं जैव चिकितसा संरक्षण में अति महत्वपूर्ण योगदान है।